राजद समाचार

आजादी, समानता और भाईचारा

अंक : 17 मासिक दिसम्बर, 2022 सहयोग राशि : 20 रुपये

इस बार

पाठकीय अभिमत 03

पार्टी गतिविधियां

लालू प्रसाद की सेहत पर 04

विदेश नीति पर पार्टी का निर्णय 05

अर्थ नीति पर पार्टी का निर्णय 06

जीवनवृत्त

उदय नारायण चौधरी पर : डॉ. दिनेश पाल 10

डॉ. लाल रत्नाकर पर : जंगबहादुर बेदिल 12

अशरफ अस्थानवी पर : सीमाब अख्तर 13

सरोकार के मुद्दे

आम्बेडकर-सावरकर के बहाने : राम पुनियानी 14

ट्रांसजेंडर पर सरकार का फैसला : डॉ. दिनेश 15

समाजवाद के सौ साल : प्रकाश चन्द्रायन 18

उर्दू पत्रकारिता के दो सौ साल : नाइश हसन 21

शख्सियत

मजहरुल हक : शहवाज हुसैन 23

शहीद बैजू मंडल : विनय कुमार सिंह 25

मास्टर जगदीश : दुर्गेश कुमार 27

पठन-पाठन

अंग्रेजी राज में कुशवाहा खेतिहर : नरेश नदीम 28

श्रद्धांजलि

धनिक लाल मंडल : रामनरेश यादव 30

संस्मरण : अशोक कुमार सिन्हा 31

कवि का पन्ना : रामकृष्ण परार्थी 34

सम्पादक

अरुण आनंद

सहयोग

कवि जी/ डॉ.दिनेश पाल

जगदानन्द सिंह

प्रदेश अध्यक्ष, राष्ट्रीय जनता दल, वीरचन्द पटेल पथ, पटना-1 द्वारा प्रकाशित एवं वितरित।

राजद समाचार की ईमेल आईडी

samacharrjd@gmail.com

यूनिफार्म सिविल कोड : सुधार के नाम पर एक और ध्रुवीकरण

हर वह मुद्दा जो हिन्दू-मुस्लिम ध्रुवीकरण को तीव्र करता हो, भाजपा के कोर राजनीतिक एजेंडा का हिस्सा रहा है। इन मुद्दों को अक्सर वह उन्हीं समयों में उभारती है जब चुनाव का वक्त आता है। हिन्दू-मुस्लिम के इस ध्रुवीकरण में हिन्दुओं के वोट का एक बड़ा हिस्सा उनकी सत्ता को सुरक्षित बनाये रखने में एक 'टूल्स' के बतौर अबतक इस्तेमाल होता रहा है। भावना के सहारे हिन्दू बहुसंख्यक समूह को मुसलमानों के आक्रांता होने और उनसे हिन्दू धर्म के खतरे के तारणहार के रूप में भाजपा खुद को हिन्दुओं के एक बडे.समूह में अपनी पैठ बनाने में कामयाब रही है। उनके इस ऑपरेशन लोटस का अभिन्न अंग हिन्दी मीडिया, एकेडमिया और उनके सैकड़ों वे संगठन रहे हैं जो सरस्वती विद्या मंदिर से लेकर स्वदेशी के नाम पर लोगों को लगातार जहरीला बनाते रहे हैं। उनके लिये रोजगार, समुचित पढ़ाई-लिखाई, दवाई, सिंचाई और विकास के समुचित अवसर की बात वह कभी नहीं करते। उनके हिन्दू धर्म खतरे में है, का भाव ही उनका वह अस्त्र है जो उन्हें मुसलमानों के खिलाफ खड़ा करता रहा है। भाजपा इसी तरह के फर्जी नैरेटिव और कारगर अस्त्र के बतौर इस बहुसंख्यक समुदाय का इस्तेमाल अपने वोट बैंक के रूप में करती रही है। भावनात्मकता के लिहाफ में धर्म के नाम पर यह डर ही वह अभेद्य दुर्ग है जिस पर सवार होकर उनका हिन्दू शासन अखिल भारतीय स्वरूप में छतनार हुआ है। भाजपा की इन भावनात्मक छलनाओं से बाहर निकलने की सारी परिस्थितियां देश में उनके ही शासनकाल में पैदा हो गई हैं। जरूरत है सही संदर्भों और ठोस वैज्ञानिक नजरिये से चीजों के वस्तुनिष्ठ आकलन की।

भाजपा ने अभी एक ऐसी ही चाल 'समान नागरिक संहिता' को लेकर चली है। संसद में सरकार ने यह प्रस्ताव सीधे नहीं लाया है। उसके राज्यसभा सांसद किरोड़ी लाल मीणा ने चालू सत्र में राज्यसभा में यूनिफार्म सिविल कोड का प्रस्ताव पेश किया है। इसके पीछे भी उसके अपने निहितार्थ होंगे, क्योंकि श्री मीणा के इस प्रस्ताव में उन्हें पार्टी का समर्थन हासिल है। राज्यसभा के 63 सदस्यों ने इस विधेयक के पक्ष में मतदान किया। 23 मत इसके विरोध में पड़े। कांग्रेस, सपा, राजद और द्रमुक ने विरोध-प्रदर्शन किया। बीजू जनता दल ने सदन से वॉक आउट किया। इस विधेयक के खिलाफ सबसे मजबूत आवाज एमडीएमके नेता वाइको ने उठाई। जब सदन में विपक्ष की संख्या कम थी तभी यह विधेयक पेश किया गया। यह अकारण नहीं कि एक फेसबुक यूजर ने लिखा, 'यूनिफार्म सिविल कोड मरे हुए लोकतंत्र में गिद्ध के शिकार जैसा है।'

भाजपा समान नागरिक संहिता के सवाल को पहले अपने शासित राज्यों में चुनावी चचाओं में लाती रही है ताकि 2024 के लोकसभा चुनाव आते-आते वह इस सवाल को केंद्रीय सवाल के रूप में मुखर कर सके और इसे भी अपने वोट बैंक के हिस्से के बतौर इस्तेमाल कर सके। उत्तराखंड में भाजपा की सरकार ने यूसीसी के कार्यान्वयन की जांच के लिए एक समिति का गठन किया और गुजरात के मुख्यमंत्री भूपेन्द्र पटेल भी इसके पक्ष में अपना इरादा जाहिर कर चुके हैं। हिमाचल प्रदेश में भी भाजपा ने अपने घोषणा पत्र में यूसीसी के कार्यान्वयन को सूचीबद्ध किया। उत्तराखंड सरकार ने तो वहां के निवासियों के निजी

दिवानी मामले को विनियमित करनेवाले संबंधित कानूनों की जांच करने और कानून का मसौदा तैयार करने के लिए विशेषज्ञों की एक कमिटी ही गठित कर दी। अबतक हमने देखा है कि किस तरह भाजपा शासित राज्यों-उत्तर प्रदेश, हिमाचल प्रदेश, गुजरात और मध्य प्रदेश में चुनावी चचाओं में 'समान नागरिक संहिता' उनकी रणनीति का हिस्सा बनती रही है। हम पहले भी देख चुके हैं कि अयोध्या में विवादित राम मंदिर का निर्माण हो या कश्मीर को विशेष राज्य के दर्जे से महरूम किया जाना-हर जगह भाजपा के निशाने पर मुसलमान रहे हैं। भाजपा की समान नागरिक संहिता की यह मांग भी कथित मुस्लिम कानूनों का हवाला देकर उठाया जा रहा है। मुस्लिम पर्सनल लॉ में तीन तलाक वैध माना गया है। भाजपा ने पहले इसे कानूनन अपराध बनाया। फिर इसे अपने हितों के बतौर इस्तेमाल करने की रणनीति में वह सफल होती दिखी। और अब तो वह मुस्लिम समाज के अंदर पसमांदा के सवाल को भी एड्रेस कर रही है, पता नहीं भविष्य में वे क्या गुल खिलायें।

'एक देश, एक कानून' की तर्ज पर 'समान नागरिक संहिता' का पाशा भाजपा ने अपनी तरकश से फेंक तो दिया है, लेकिन सवाल यह उठता है कि यह प्रस्ताव सरकार सीधे सदन में क्यों नहीं लाना चाह रही? इसे अपने एक सांसद के माध्यम से लाने के पीछे उसका इरादा क्या है? सवाल यह भी है कि क्या इससे जाति, धर्म, वेशभूषा के कारण देश में होनेवाले भेदभाव मिट जाएंगे? क्या इससे मानव अधिकारों की रक्षा सुनिश्चित हो जाएगी? यह प्रक्रिया क्या सचमुच इतनी सरल है कि सभी पंथ के लोगों के लिए समान रूप से लागू हो जाएगी? अलग-अलग पंथों के लिए न होना ही समान नागरिक संहिता की मूल भावना है। ऐसे में यह संभव ही नहीं कि सभी नागरिकों पर उनके धर्म, लिंग या यौन अभिविन्यास की परवाह किये बिना इसे लागू किया जाए और यह उनके बीच मान्य हो।

भारत अपनी भाषाई, सांस्कृतिक और धार्मिक विविधताओं के लिए जाना जाता है। यहां के विभिन्न समुदायों में उनके धर्म और लोकाचार के आधार पर अलग-अलग कानून हैं। ऐसे में भारत जैसे विविधतापूर्ण और व्यापक आबादी वाले देश में समान नागरिक कानूनों को एकीकृत करना बेहद मुश्किल है। मुस्लिम पर्सनल लॉ भी सभी मुसलमानों के लिए समान नहीं है। बोहरा मुसलमानों में उतराधिकार के बहुत सारे मामले हिन्दुओं से मेल खाते हैं वहीं संपति और उतराधिकार के मामले में अलग-अलग राज्यों में अलग-अलग कानून हैं। वहीं पूर्वोतर भारत के ईसाई बहुल राज्यों में अलग-अलग कानून हैं। नागालैंड मिजोरम के अपने पर्सनल लॉ हैं वहां पर अपनी प्रथाओं का पालन होता है न कि धर्म का। इसी तरह बच्चा गोद लेने के मामले सभी जगह अलग-अलग हैं। हिन्दू परम्परा में किसी को भी गोद लिया जा सकता है, इसके पश्चात वह संपति का वारिस हो सकता है, लेकिन क्या इस्लाम में यह गोद लेने की मान्यता है? भारत में 'जुवेनाइल जस्टिस लॉ' है जो नागरिकों को धर्म की परवाह किये बिना गोद लेने की अनुमति देता है अगर कॉमन लॉ हुआ तो गोद लेते समय नियम बनाते समय क्या तटस्थ सिद्धांत होंगे-हिन्दू, मुस्लिम या फिर ईसाई? यूसीसी को इस तरह के कई बुनियादी सवालों से दो-चार होना होगा। शादी या तलाक का मानदंड क्या होगा; गोद लेने की प्रक्रिया और परिणाम क्या होंगे; तलाक के मामले में गुजारा भत्ता या संपति के बंटवारे के अधिकार का क्या होगा? संपति के उतराधिकार के नियम क्या होंगे? ये सब ऐसे सवाल हैं जिसको एड्रेस करना आसान नहीं होगा। भाजपा के लिए यक्ष प्रश्न यह भी है कि धर्मांतरण कानून और समान नागरिक कानून का सामंजस्य वह कैसे करेगी? जो स्वतंत्र रूप से भिन्न धर्मों और समुदायों के बीच विवाह की अनुमति देता है। जबकि धर्मांतरण कानून और धार्मिक विवाहों पर अंकुश लगाने का समर्थन करता है। एक अच्छा कानून वही होता है जो साफ और वैधानिक हो। समान नागरिक संहिता के सवाल पर जो पेंचीदगियां उभर रही हैं उससे लगता नहीं कि उसको कोई सकारात्मक स्वरूप तक पहुंचाया जा सकेगा।

राष्ट्रपति के सवाल

भारत की राष्ट्रपति द्रौपदी मुर्मू का एक भाषण सुर्खियों में है। संविधान दिवस के मौके पर देश की सबसे बड़ी अदालत के सभागार में चीफ जस्टिस, जजों, मंत्रियों और दिग्गज वकीलों की सभा में उन्होने जो भाषण दिया उसकी खूब तारीफ हो रही है। उन्होंने अपने अभिभाषण में कहा कि उन लोगों को भी न्याय मिलना चाहिए जो छोटे-छोटे अपराधों में जेल में बंद हैं। उन्होंने सवाल उठाया कि आप लोग जेल में बंद उन लोगों के बारे में सोचिये जो थप्पड़ मारने के जुर्म में सालों से जेल में बंद हैं। उनके लिए सोचिये। उनको न तो अपने अधिकार के बारे में पता है, न ही संविधान, प्रस्तावना या मौलिक अधिकारों या संवैधानिक कर्तव्यों के बारे में। उनके घर वाले उनको छुड़ाने की हिम्मत नहीं कर पाते क्योंकि मुकदमा लड़ने में उनके घर के बर्तन बिक जाते हैं। राष्ट्रपति ने विकास के मौजूदा ढांचे को प्रश्नांकित करते हुए कहा कि कहा कि ये कैसा विकास है जहां जेल खत्म किया जाना था आप उसकी संख्या बढ़ाते जा रहे हैं। द्रौपदी मुर्मू भारत के उन राष्ट्रपतियों में हैं, जिन्होंने इस पद को सत्ताधारी दल की जागीर समझ नतमस्तक नहीं हुई हैं। उन्होंने वही बात कही है जो आज का आदिवासी या हाशिये का समाज भुगत रहा है। वह अपने कर्तव्यों का निर्वहन भारत के पूर्व राष्ट्रपति के. आर. नारायणन की तर्ज पर उपयोग कर रही हैं। एक राष्ट्रपति रामनाथ कोविद भी रहे जिन्हें जगन्नाथ मंदिर जाने से रोक दिया गया और वे कुछ नहीं कर पाये। एन.आर.सी, सी.ए.ए जैसे देश तोड़क सवालों पर मौन साधे रहे। ऐसे लोगों को इतिहास याद नहीं रखता। के. आर. नारायणन ने अपने अधिकारों को समझा था। उन्होंने बहुत बेखौफ होकर उसका उपयोग भी किया। उत्तर प्रदेश और बिहार में राष्ट्रपति शासन लगाने की केन्द्र सरकार की अनुशंसा को उन्होंने खारिज कर दिया था और पुनर्विचार करने के लिए लौटा दिया था। उन्होंने लोकसभा के दो कार्यकाल को भंग कर दिया था। 2002 के गुजरात दंगे के समय दी गई उनकी प्रतिक्रिया की दुनिया भर में चर्चा हुई थी। उन्होंने कहा था, 'भारत के राष्ट्रपति के रूप में मैंने बेहद दुखी और स्वयं को असहाय महसूस किया। कई ऐसे अवसर आये जब मैं देश के नागरिकों के लिए कुछ नहीं कर सका। सीमित शक्तियों के कारण मैं पीड़ा महसूस करता था।'

भारत के इतिहास में ऐसे रीढ़वाले नेता कम हुए हैं। आज जबकि व्यक्ति पूजा की प्रवृत्ति अपने रौद्रतम रूप में हावी है राष्ट्रपति द्रौपदी मुर्मू का यह सवाल एक उम्मीद पैदा करता है और संवैधानिक पदों की गरिमा को कैसे अक्षुण्ण रखा जाए इसकी एक सीख भी हमें देता है।

बिहार के छपरा में जहरीली शराब पीने से पच्चास से ज्यादा लोगों की मौत हो गई। और लगभग इतनी ही संख्या में लोग अंधेपन का शिकार हो गए। इतनी हृदयविदारक और मर्मांतक घटना प्रदेश के लिए एक नासूर की तरह है। 'राजद समाचार' मृतकों के प्रति अपनी संवेदना प्रकट करता है और कामना करता है कि सरकार उनकी सुध ले।

हमेशा की तरह इस अंक पर भी आपकी प्रतिक्रिया का स्वागत है।

अरुण आनंद

पाठकीय अभिमत

नियमित प्रकाशन आश्वस्तकारी

वर्तमान दौर में जब अधिकांश राजनीतिक दलों के मुखपत्र लगभग अदृश्य या निष्प्रभावी हो गए हैं तब राष्ट्रीय जनता दल के मुखपत्र 'राजद समाचार' और सीपीआई (एम.एल.) के मुखपत्र 'लिबरेशन' का नियमित स्तरीय प्रकाशन आश्वस्तकारी है। इन दोनों ही मुखपत्रों की सामग्री वैचारिक रूप से समृद्ध करने वाली है। 'राजद समाचार' के इस अंक में डॉ. लोहिया पर विशेष सामग्री प्रकाशित है। लोहिया पर धर्मवीर भारती का लेख विशेष महत्व का है। 'हिंदू बनाम हिंदू' शीर्षक से डॉ. लोहिया का लेख वर्तमान संदर्भ में उल्लेखनीय है। अन्य सामग्री भी पठनीय और वैचारिक रूप से समृद्ध करने वाली है। 'लिबरेशन' का मैं वर्षों से पाठक हूं। मेरी सम्मति है कि राजनीतिक दलों के मुखपत्रों में यह सर्वश्रेष्ठ है। इसमें राष्ट्रीय व अंतर्राष्ट्रीय महत्व के मुद्दों का गहरा विश्लेषण होता है। परिवर्तनकामी राजनीतिक दलों द्वारा इस दौर में वैचारिक हस्तक्षेप की जरूरत है। मुझे नहीं पता कि समाजवादी पार्टी, बसपा या अन्य राजनीतिक दल अपना कोई मुखपत्र प्रकाशित भी करते हैं या नहीं। सीपीएम का मुखपत्र 'पीपुल्स डेमोक्रेसी' और सीपीआई का मुखपत्र 'न्यू एज' का नियमित प्रकाशन तो होता है, लेकिन अब इनमें पहले सरीखी ऐसी वैचारिक विचारोत्तेजक सामग्री प्रायः नहीं होती, जिससे इसे पढ़ना जरूरी लगे। सीपीएम का 'लोकलहर' अपेक्षाकृत बेहतर होता है।

वीरेंद्र यादव
(अपनी फेसबुक वॉल पर)
वरिष्ठ मार्क्सवादी आलोचक, लखनऊ

संदेश की संवाहक पत्रिका

राजद समाचार पत्रिका अंक-16 प्राप्त हुआ। पूर्व के अंक की तरह ही यह अंक भी संग्रहणीय है। 'आरक्षण में वृद्धि और उसके दायरे का विस्तार' शीर्षक से लंबा संपादकीय समसामयिक व महत्वपूर्ण है। पिछले 7 नवंबर 2022 को अंततः सर्वोच्च न्यायालय की पांच सदस्यीय बेंच ने 3-2 के अनुपात में बहुमत के आधार पर आर्थिक आधार पर गरीब सवर्णों को दिये जाने वाले आरक्षण को वैधता प्रदान कर दीया। वैसे यह निर्णय पूरी तरह से संविधान विरोधी है लेकिन मेरी जानकारी में सिर्फ भाकपा माले को छोड़कर किसी भी अन्य राजनीतिक दलों ने न तो कड़ा विरोध किया और न ही इसके खिलाफ कोई आंदोलन विकसित करने की बात ही कही। हम जानते हैं कि वर्तमान में बिहार में महागठबंधन की सरकार है जिसमें तीन वामपंथी दलों व कांग्रेस को छोड़कर राजद, जदयू और हम सरकार में शामिल हैं। क्या आने वाले दिनों में महागठबंधन में शामिल दल संयुक्त रूप से इस संविधान विरोधी सुप्रीम कोर्ट के निर्णय के विरुद्ध 'बिहार विधान मंडल' में एक प्रस्ताव पारित करेंगे? यह यक्ष प्रश्न है। संपादकीय में बिहार विधानसभा उप चुनाव में मोकामा और गोपालगंज के चुनाव परिणाम की भी चर्चा की गई है। मोकामा से राजद प्रत्याशी नीलम देवी ने भाजपा प्रत्याशी को पराजित कर जीत दर्ज की है। लेकिन गोपालगंज से राजद प्रत्याशी मोहन प्रसाद गुप्ता मामूली मतों (2157) से पराजित हो गये। इसके कई कारण गिनाये जा रहे हैं लेकिन सबसे महत्वपूर्ण कारण मेरी दृष्टि में गठबंधन में शामिल दलों के बीच आपसी समन्वय का आभाव है। बिहार में महागठबंधन की सरकार पिछले 10 अगस्त 2022 से सत्तारूढ़ है। लेकिन न राज्य स्तर पर और न ही प्रखंड स्तर पर आज तक कोई समन्वय समिति बनी है। ऐसी स्थिति में भाजपा जैसी पार्टी को आगामी लोकसभा चुनाव 2024 में शिकस्त देना थोड़ा कठिन होगा। क्या आने वाले दिनों में राजद इस दिशा में आवश्यक पहल करेगी?

पार्टी गतिविधियां के तहत सामाजिक, आर्थिक असमानता का खात्मा हमारा लक्ष्य के तहत राजनीतिक प्रस्ताव जिसे पार्टी के विद्वान प्रधान महासचिव अब्दुल बारी सिद्दीकी जी ने रखा है वह बहुत ही समीचीन है। बस जरूरत है सिर्फ उसे कठोरतापूर्वक लागू करने की। इसके अलावा सामाजिक प्रस्ताव और आर्थिक प्रस्ताव पर गंभीरतापूर्वक विचार किया गया है। डॉ दिनेश पाल जी ने 'आपन गांव, आपन माटी' शीर्षक के तहत बढ़िया लिखा है। पी.साईनाथ के व्याख्यान को मनीष शांडिल्य ने बहुत ही अच्छे ढंग से प्रस्तुत किया है वे बधाई के पात्र हैं। इसमें जिस बिंदु पर खास चर्चा की गई है वह है बढ़ती हुई आर्थिक असमानता। यूं तो पहले भी हमारे देश में आर्थिक असमानता थी, लेकिन उसकी खाई इतनी चौड़ी नहीं थी जितनी वर्ष 1991 के बाद विकराल रूप से बढ़ती जा रही है। एक ओर कुछ लोग अरबपतियों की श्रेणी में बढ़ते जा रहे हैं तो विशाल बहुसंख्यक आबादी अपनी मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति करने में अक्षम हो रहे हैं। यह हमारे समय की सबसे बड़ी विद्रूपता है। इससे निजात पाने की क्या पहल हो विचारणीय प्रश्न यह है। विरासत के तहत अशोक कुमार सिन्हा जी का आलेख 'भारतीय कला की अनुपम कृति : दीदारगंज की यक्षिणी' बहुत ही ज्ञानवर्धक है। इससे हमें ऐतिहासिक विषयों की जानकारी प्राप्त होती है। भारत के पहले शिक्षा मंत्री डॉ अबुल कलाम आजाद जी की जयंती पर डॉ मो. दानिश जी का आलेख 'अबुल कलाम आजादः एक बेमिसाल शख्सियत' के तहत उनके भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन में योगदान को रेखांकित किया गया है। आज जब देश में एक ऐसी विचारधारा की सरकार है जो खासकर अल्पसंख्यकों को खलनायक की तरह प्रस्तुत कर रही है ऐसे में इस तरह के व्यक्ति के व्यक्तित्व को सामने लाना समय की मांग है। सत्यनारायण प्रसाद यादव जी ने किराई मुशहर पर बढ़िया लिखा है। पठन-पाठन के तहत साहित्य में पिता शीर्षक से नरेंद्र कुमार ने अनामिका शिव के संपादन में प्रकाशित पत्रिका 'किस्सा' जो पिता पर केंद्रित अंक है उस पर बढ़िया लिखा है। वहीं संजीव चंदन जी ने वंदना सोनलकर की पुस्तक : 'व्हाय आय एम नॉट अ हिन्दू वुमन' पर शानदार लिखा है। इससे पाठकों को नई- नई पुस्तकों के बारे में भी जानकारी मिलती है। श्रद्धांजलि के तहत जगदीश्वर चतुर्वेदी ने 'मैनेजर पांडेय : एक पूर्णकालिक आलोचक' के तहत उन्हें बहुत ही अच्छी तरह से याद किया है। वैसे इसमें कई ऐसे प्रसंगों की चर्चा की गई है जिस पर अलग से विस्तार से चर्चा की जरूरत है।

कवि का पन्ना के तहत चर्चित युवा कवि बच्चा लाल उन्मेष जी की कविता 'हिन्दू वाली फाइल्स' बेहद ही प्रासंगिक कविता है। ऐसे ही कवियों की कविताओं को नियमित रूप से देने का काम करें।

अंत में एक आग्रह है कि आगामी अंक में बिहार सरकार में शामिल मंत्रियों का आवासीय पता व मोबाइल नबंर एवं ईमेल आईडी देने का कष्ट करें ताकि बिहार की आवाम अपने क्षेत्र के बारे में उन्हें सही जानकारी दे सकें। इसके साथ ही बिहार में जितने भी आयोग और कमिटी बनाई गई है उसके बारे में भी जानकारी दें।

विनय कुमार सिंह
बरियारपुर, मुंगेर।

■

शाबाश! रोहिणी आचार्य

कुछ साल पहले एक तस्वीर सोशल मीडिया में खूब वायरल हो रही थी, जो कि यूरोप के 'अल्फ्रेड पीटर मुरिलो' नामक पेंटर ने पेंटिंग के रूप में बनाई थी। दरअसल उस तस्वीर के साथ यही साझा किया जा रहा था कि एक कैदी को यूरोप में एक जेल के अंदर भूख से मरने की सजा मिली जब यह सजा उसे मिली। पिता को सजा मिलते ही उनकी बेटी ने सरकार से गुहार लगाई कि उन्हें रोज पिता से मिलने की अनुमति दी जाए और सरकार इस बात पर राजी भी हो गई। बेटी जब अपने पिता से मिलने जाती तो चोरी से उन्हें अपना दूध पिला दिया करती थी। यह सिलसिला कई दिनों तक चलता रहा और कैदी जब भूख से नहीं मरा तब जेल के पहरेदार को आश्चर्य हुआ कि आखिर यह व्यक्ति भूख से मर क्यों नहीं रहा है। पहरेदारों को कैदी की बेटी पर संदेह हुआ और वे बेटी की भी निगरानी करने लगे। पहरेदारों ने देखा कि पुत्री अपने पिता को स्तनपान करा रही है। बाप-बेटी दोनों को कोर्ट में पेश किया गया और कोर्ट ने दोनों को रिहा कर दिया। यह कहानी मात्र है या सच्ची घटना है मुझे नहीं पता, लेकिन मार्मिक और प्रेरक जरूर है। बाप-बेटी के बीच असीम स्नेह का प्रतीक भी है। जरा सोचिए पहलीबार स्तनपान कराने से पहले बाप-बेटी दोनों कितना असहज रहे होंगे। मानसिक रूप से कितना परेशानी हुई होगी। ऐसे भी कहा जाता है कि बेटियां बाप के बुढ़ापे में उनकी मां बन जाती हैं। जैसे एक मां अपने बच्चे का ख्याल रखती है और उसका पालन-पोषण करती है, लगभग वैसा ही बूढ़े बाप के साथ बेटियों का व्यवहार हो जाता है। कुछ ऐसा ही हुआ है दिसम्बर माह के प्रथम सप्ताह में। जिस पुत्री का पिता ने वर्षों पहले कन्यादान किया था, वही पुत्री पिता को जीवनदान दी है। स्पष्ट हो कि यहां 'कन्यादान' जैसे शब्द के समर्थन की मंशा नहीं है। जी, हां! 5 दिसम्बर को सोशल मीडिया पिता-पुत्री की तस्वीर से पट गया था। दरअसल बिहार में वंचित तबका को स्वर देने वाले सामाजिक न्याय के बड़े चैम्पियन पूर्व मुख्यमंत्री तथा पूर्व केंद्रीय रेल मंत्री राजद प्रमुख लालू प्रसाद यादव का किडनी ट्रांसप्लांट हुआ और किडनी डोनर कोई और नहीं बल्कि उनकी बेटी रोहिणी आचार्य हैं। सिर्फ बिहार में ही नहीं बल्कि पूरे देश में लोग दोनों जन के स्वास्थ्य को लेकर दुआ व प्रार्थना करते दिखे। साथ ही रोहिणी जैसी बेटी पर गर्व और उनके साहस को सलाम करते हुए लोगों को देखा गया। ऑपरेशन थियेटर में जाने से पहले रोहिणी आचार्य ने पिता के साथ तस्वीर साझा करते हुए सोशल मीडिया पर लिखा-

Ready to rock and roll/Wish me a good luck

भोजपुरी माटी के लाल लालू ने ऑपरेशन थियेटर में जाने से पहले कहा कि, 'चिंता के कौनो बात नईखे, दू-तीन घण्टा में आवत तानी..साल 2014 में त मुंबई में त 6-7 घण्टा लगल रहे हार्ट के ऑपरेशन में का भईल सब ठीक रहल इहो ऑपरेशन ठीक होई।' उक्त बातें बिहार के उपमुख्यमंत्री तेजस्वी यादव के हवाले से दैनिक भास्कर ने 6 दिसम्बर को छापा है। विदित हो किडनी प्रत्यारोपण के समय राबड़ी देवी, तेजस्वी यादव एवं मीसा भारती समेत लालू-परिवार के कई सदस्य सिंगापुर के 'माउण्ट एलिजाबेथ हॉस्पिटल' में उपस्थित रहे। सुबह लगभग 10 से 12 बजे के बीच रोहिणी आचार्य का सफल ऑपरेशन करके किडनी निकाला गया, फिर ऑपरेशन प्रोसेस के तहत उस किडनी को लगभग 1 से 3 बजे के बीच लालू प्रसाद के शरीर में प्रत्यारोपित किया गया। ऑपरेशन के बाद दोनों को आईसीयू में भर्ती किया गया था। होश आते ही लालू ने पूछा कि, 'रोहिणी के का हाल बा'। जाहिर-सी बात है कि उन्हें अपने से अधिक बेटी की चिंता रही होगी, यह स्वाभाविक भी है क्योंकि पिता उम्र के आखिरी पड़ाव पर हैं जबकि बेटी के सामने पूरा जीवन है और उसके तीन नन्हे-मुन्हें बच्चे भी हैं। बेटी किडनी के लिए बहुत आसानी से कोई पिता नहीं मानेगा, फिर लालू जैसा संवेदनशील व्यक्ति को मनाने में बेटियों को,

लालू प्रसाद और रोहिणी आचार्य : किडनी ट्रांसप्लांट के बाद

पूरे परिवार को एवं डॉक्टरों को कितनी मानसिक मशक्कत करनी पड़ी होगी यह तो वही लोग जानते होंगे। लालू जी जब से अस्वस्थ हैं तब से अधिक समय वे अपनी बड़ी बेटी मीसा भारती के घर ही रहते हैं। वहीं से अपना इलाज कराते थे। मालूम हो कि लालू-राबड़ी के नौ बेटे-बेटियों में दूसरे नम्बर पर हैं रोहिणी अर्थात मीसा भारती के बाद सबसे बड़ी हैं। डॉ. पुष्पलता हँसडक बताती हैं कि रोहिणी छात्र जीवन से ही बहुत सुंदर, मृदुभाषी एवं शांत स्वभाव की संवेदनशील मन मिजाज की रही हैं। रोहिणी ने सम्भवतः महात्मा गांधी चिकित्सा महाविद्यालय एवं अस्पताल, जमशेदपुर से एमबीबीएस भी किया है। इनकी शादी 24 मई, 2002 को औरंगाबाद जिले के दाउदनगर निवासी राव रणविजय सिंह के बेटे राव समरेश सिंह से हुई है और सपरिवार सिंगापुर में रहती हैं लेकिन बिहार की राजनीति पर उनकी नजर रहती है। लगभग हर मुद्दे पर बेबाकी से सोशल मीडिया के जरिये अपनी बात को रखते रहती हैं। देश के प्रधानमंत्री मंत्री नरेन्द्र मोदी ने बिहार के उप मुख्यमंत्री तेजस्वी यादव को फोन करके लालू प्रसाद तथा रोहिणी का हालचाल जाना। बिहार के मुख्यमंत्री नीतीश कुमार ने भी तेजस्वी को फोन करके दोनों के स्वास्थ्य की जानकारी ली। केंद्रीय मंत्री गिरिराज सिंह ने 'रोहिणी आचार्य' की तस्वीर साझा करते हुए ट्वीट किया कि-'बेटी हो तो रोहिणी आचार्य जैसी' गर्व है आप पर आप उदाहरण होंगी आने वाली पीढ़ियों के लिए। झारखण्ड के गोड्डा से सांसद निशिकांत दुबे ने रोहिणी की तारीफ करते हुए ट्वीट किया कि, 'मुझे भगवान ने बेटी नहीं दी, आज रोहिणी आचार्य को देखकर सचमुच भगवान से लड़ने का दिल कर रहा है...।' वरिष्ठ पत्रकार रवीश कुमार ने तो फेसबुक पर एक लंबा पोस्ट लिखा था। जननेता लालू प्रसाद की लोकप्रियता का आलम यह है कि बड़े-बड़े राजनेता, साहित्यकार, पत्रकार एवं नामचीन हस्तियों के साथ-साथ आम जनता भी दोनों के शीघ्र स्वस्थ होने की कामना करते दिखे। धार्मिक प्रवृत्ति के कुछ लोग तो लालू-रोहिणी के स्वास्थ्य लाभ के लिए पूजा-पाठ व हवन तक करने लगे जबकि उन्हें भी पता है कि वे दोनों स्वस्थ दवा से ही होंगे, लेकिन उनके ईश्वरीय आस्था का क्या कहा जाए। बहरहाल बाप-बेटी दोनों स्वस्थ हैं लेकिन पूरी तरह स्वस्थ होने में अभी समय लगेगा। किडनी ट्रांसप्लांट करा चुके 'स्त्रीकाल' के संपादक संजीव चन्दन का कहना है कि, 'किडनी ट्रांसप्लांट के बाद का एक साल बेहद महत्वपूर्ण होता है। इंफेक्शन से बचना जरूरी है। शरीर की रोधक क्षमता घटाकर रखी जाती है। डोनर को एक सप्ताह तक थोड़ी तकलीफ रहती है, दर्द आदि की। डोनर की जिंदगी भी बदल जाती है। वे नियम के प्रति सचेत हो जाते हैं।' डॉ. आर. के. यादव के हवाले से वे लिखते हैं कि, 'डोनर का जीवन आमतौर पर चार-पांच साल बढ़ जाता है। खान-पान दिनचर्या के कारण। दुनिया भर का औसत है यह।' उन्होंने यह भी लिखा है कि अधिकांश अंगदान महिलाएं ही करती हैं जबकि पुरुषों को भी आगे आना चाहिए। 'राजद समाचार' लालू प्रसाद तथा रोहिणी आचार्य के शीघ्र स्वस्थ होने की कामना करता है।

■

जो मुकाम अब तक देश को मिलना चाहिए था, नहीं मिला

विदेश नीति प्रस्ताव

सूचना प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में तेजी से बदलाव आयें हैं और इन बदलावों का सीधा-सीधा असर भूमंडलीकरण की तमाम प्रक्रियाओं पर पड़ा है - चाहे मीडिया हो या व्यापार और निवेश। जहां एक ओर भौगौलिक और सामुदायिक दूरियां घटी हैं और सांस्कृतिक और व्यावसायिक आदान-प्रदान बढ़ा है, दूसरी तरफ कई चिंताजनक पहलू भी उजागर हुए हैं। पिछले साल वैश्विक महामारी के चरम के दौरान कोविड-19 टीके के ऊपर खेदजनक राजनीति देखने को मिली। जहां वैश्विक दक्षिण के देशों को नव उदारवादी व्यवस्था के चलते उन्नत पूंजीपति देशों की राहत के लिए मुंह ताकना पड़ा। महामारी पूरी तरह से खत्म भी नहीं हुई थी कि एक अकल्पनीय युद्ध शुरू हो गया जिसमे अभी तक हजारो लोगों की जान चुकी है, जिसकी वजह से महामारी की मार से उबरने के बजाय वैश्विक अर्थव्यवस्था एक संकट के दौर में धकेलं दी गयी है। जलवायु परिवर्तन ने लगभग हर महाद्वीप पर करोड़ों लोगों को बेघर कर दिया है। दिन की खबरों का जायजा लें तो समकालीन वैश्विक रिश्तों में पिछ्ली सदी के साम्राज्यवाद, ध्रुवीकरण, युद्ध, आर्थिक असामनता, आर्थिक मंदी, और दक्षिणपंथी शक्तियों के पुनरुत्थान की झलकियां दिखती हैं। जैसा कहा जाता है जितना ज्यादा बदलाव होता है, उतनी ही चीजें नहीं बदलती हैं। इस सन्दर्भ में विदेश नीति में सैद्धांतिक स्पष्टता, नैतिकता, निरंतरता, और अग्रसक्रियता की आवश्यकता है। इतिहासबोध से अवगत एक ठोस और दीर्घकालिक मापचित्र की आवश्यकता है।

राष्ट्रीय जनता दल (राजद) अपने स्थापना काल से ही इस बात का पक्षधर है कि भारतीय विदेश नीति हमारी सार्वभौमिक प्राथमिकताओं और हमारे जनोन्मुख राजनीति का ध्वजावाहक होना चाहिए। आजाद भारत की विदेश नीति की बुनियाद शुरूआती दशक से ही वैश्विक निशस्त्रीकरण और गुट निरपेक्षता के सिद्धांतों पर रही है और राजद इस विचार को और प्रमुखता से आगे ले जाने का पक्षधर है। 1940 और 1950 के दशकों में ध्रुवीकरण और शीत युद्ध के दौरान जब नव-आजाद देशों को विकल्पहीनता का आभास हो रहा था, ऐसे समय में भारत ने विश्व को विदेश नीति का नया मंत्र दिया था- गुट निरपेक्षता का। वैश्विक रिश्तों की स्थिति बदल गयी है। पर बदली हुई परिस्थति में यह आवश्यक है कि हम अपने विदेश नीति की सैद्धांतिक स्पष्टता, नैतिकता, और निरंतरता को कायम रखें। परन्तु वर्तमान सरकार के 8 सालों में देखा गया है कि विदेश नीति प्रतिक्रियात्मक हो गयी है और हर वैश्विक रिश्ते, परिस्थिति, और चुनौती को जोड़-तोड़-पैबंद-जुगाड़ की नियत से देखा जाता है। हमारी विदेश नीति की प्राथमिकता देश हित न होकर व्यक्ति विशेष को महिमामंडित करने की बनती जा रही है। विदेश नीति को घरेलू राजनैतिक फायदों के लिए तोड़ा-मरोड़ा जा रहा है और घरेलू राजनीति में अवसरवादिता की वजह से वैश्विक स्तर पर देश की छवि धूमिल हो रही है। देश हित की जगह सत्ताधीन पार्टी की विचारधारा विदेश नीति का आधार बन गई है। आज पड़ोसी देशों के साथ संबंध में ढीलापन महसूस किया जा रहा है। अस्पष्टता और अनिश्चिता के चलते नये-पुराने संबंधों और समीकरणों में अंतर्विरोध दिख रहे हैं। विश्व स्तर पर जो मुकाम अब तक देश को मिलना चाहिए था अभी भी पहुंच के उतना ही बाहर दिखता है जितना एक दशक पहले था। राजद का यह भी मानना है कि हमारी विदेश नीति तात्कालिक दबाव, अपवाद, और प्रतिक्रिया की नहीं बल्कि सम्प्रभुता, निरंतरता, और अग्र सक्रियता की परिचायक होनी चाहिए।

राजद का यह मानना है कि विदेश नीति का एक और अकेला उद्देश्य होना चाहिए-वह है देश हित। विदेश नीति के नाम पर घरेलू राजनीति में वाह-वाही बटोरना या घरेलू राजनीति के लिए दूसरे देशों से संबंधों में तनाव पैदा करना भारत के हित में नहीं है। पिछले 8 सालों में नेताओं और मंत्रियों के सार्वजनिक बयानों और बिना सोचे-समझे बनाये गये कानूनों की वजह से भारत की दक्षिण एशिया के देशों के बीच लम्बे समय में स्थापित हुई प्रतिष्ठा को नुकसान हुआ है। भूमंडलीकरण और नव उदारवाद के इस दौर में भी भारतीय विदेश नीति प्रखर रूप से अपने इतिहास और अपने मूल्यों के अनुरूप हो। राजद इस बात का लगातार प्रयास करेगा कि हमारी विदेश नीति किसी वैश्विक शक्ति का अंधाधुंध अनुसरण न करे और न ही हमारी विदेश नीति किसी नव साम्राज्यवादी सोच की अनुयायी बन जाए। हजारों वर्ष पुरानी हमारी सभ्यता की पहचान विश्व शांतिदूत के रूप में है और हमें अपनी उस भूमिका का लगातार निर्वहन करना चाहिए।

विदेश नीति देशों और उनके देशवासियों के बीच के रिश्ते पर कायम होती है। नेता और राजनयिक अस्थायी हैं और व्यक्तिगत रिश्तों पर आधारित विदेश नीति टिकाऊ नहीं हो सकती। आर्थिक और व्यावसायिक मुद्दे विदेश नीति का महत्वपूर्ण अंग हैं। भारत सरकार का दायित्व है कि इस मामले में भारतीय व्यवसायियों को विश्व स्तर पर कारोबार करने के लिए बराबरी का मौका मिले। सरकार द्वारा कुछ चुनिंदा व्यवसायियों को बढ़ावा देना देश हित में नहीं है। साथ ही विदेश में भारत के आर्थिक और व्यावसायिक हितों को बढ़ावा देते हुए इस बात का खास ध्यान देना है कि हम छोटे और विकासशील देशों को आत्मनिर्भर बनने में मदद करें। राजद पड़ोसी देशों के साथ-साथ दुनिया के सभी देशों के साथ सौहार्दपूर्ण संबंधों का पक्षधर है। राजद पड़ोसी देशों और खासतौर पर दक्षिण एशिया के देशों के साथ बेहतर संबंधों को इस क्षेत्र में शांति और प्रगति के लिए आधारभूत शर्त मानता है। ऐसे संबंधों की बुनियाद समता और आदर पर होनी चाहिए। राजद पड़ोसी देशों के साथ खुले और निरंतर संवाद से तालमेल के नये आयाम सृजन करने का पक्षधर है। चीन का भारत की तरफ रवैया साफतौर पर एक अति महत्वाकांक्षी रूप ले चुका है। घेराबंदी, बेसबब उकसाना, घुसपैठ, और भूभाग पर कब्जा इस रूप के कई आयाम हैं। इसके बावजूद चीन के मामले में केन्द्र सरकार की चुप्पी हमारी अस्मिता और अखंडता के विरूद्ध है। भारत सरकार को इस पर खुलकर बोलना चाहिए और सभी देशवासियों को स्थिति से अवगत कराना चाहिए। हमारे पड़ोसी देशों में चीन की बढ़ती दिलचस्पी भी हमारे लिए चिन्ता का विषय है। चीन की घेराबंदी से हमें सुरक्षित रहने की आवश्यकता है। दूसरी ओर दोनों देशों के बीच आर्थिक और व्यावसायिक मुद्दों पर भी गंभीरता और संवेदनशीलता से विचार करने की आवश्यकता है। राजद का पुख्ता यकीन है कि पाकिस्तान के साथ हमारे रिश्ते सिर्फ तात्कालिक प्रसंग और अस्पष्टीकृत प्रयोग की तस्वीरों से नहीं बल्कि दीर्घकालिक सरोकारों और दोनों मुल्कों को अवाम की

प्राथमिकताओं के आधार पर गूढ़ता से आगे बढ़ना चाहिए। राजद सीमा पार आतंकवाद के खात्मे को तरजीह देते हुए पाकिस्तान से दोस्ताना संबंध का समर्थक है। लेकिन हिंदुस्तान की अस्मिता और सम्मान की कीमत पर कोई समझौता नहीं चाहता है। राजद विश्व स्तर पर किसी भी मुल्क में किसी भी उपेक्षित समुदाय के उत्पीड़न और उन पर हो रहे अत्याचार के खिलाफ भारत की महती भूमिका का हमेशा से समर्थक रहा है और इस दिशा में भारत की प्रभावी पहल की वकालत करता रहेगा। जलवायु परिवर्तन एक वैश्विक समस्या है। भारत को इस समस्या से हर स्तर पर जूझने के लिए तैयार रहना होगा। आने वाले समय में भारत को संजीदगी से विदेश नीति के अंतर्गत शरणार्थी नीति के बारे अहम फैसले लेने होंगे।

(पार्टी की राष्ट्रीय कार्यकारिणी में पढ़ा गया पर्चा।)

■

देश आर्थिक मोर्चे पर खस्ताहाल है

(आर्थिक प्रस्ताव का शेष भाग)

लोकतंत्र का सबसे खराब रूप भी अघोषित आपातकाल से अच्छा होता है। (worst form of democracy is better than unannounced emergency regime) आज देश में अघोषित आपातकाल का दौर चल रहा है, दिशाहीन सामाजिक-आर्थिक नीतियां नोटबंदी, GST, किसान कानून, श्रम-कानून, यूएपीएं कानून, भू-अर्जन अध्यादेश, शिक्षा नीति डिजिटलीकरण; संविधान विरुद्ध नीतियां, पेगासास, इलेक्टोराल बॉन्ड, अम्बानी-अडानी नीतियां, कोरोना के दौरान बृहत स्तर पर पलायन का प्रतिफल निम्न आर्थिक संवृद्धि का स्तर, बढ़ता राजकोषीय घाटा, बढ़ती मंहगाई, उच्च बेरोजगारी दर, बढ़ती असमानताएं, कम श्रम भागीदारी दर, मंहगाई, समानांतर काली बैंकों का दिवालिया अर्थव्यवस्था, स्विस बैंकों में धन का जमा किया जाना, होना है।

प्रिय देशवासियों, राष्ट्रीय जनता दल जब भी विपक्ष में रहा है उसने सरकार के कार्यों का लेख-जोखा समय-समय पर आपके सामने प्रस्तुत किया है। जनतांत्रिक पार्टी में विपक्ष का मुख्य कर्तव्य है कि सरकार की नीतियों और मंशा को देश के सामने रखे।

राष्ट्रीय जनता दल, राष्ट्रीय कार्यकारिणी कमिटी की बैठक 9 अक्टूबर 2022 को आहूत की गई। इस बैठक के एजेंडे में देश की वर्तमान अस्थिर आर्थिक स्थिति पर विचार-विमर्श हुआ। ऐसा लगता है कि देश में बिना सोचे-समझे आर्थिक नीतियां बनाई जा रही है।

देश का लेखा-जोखा

1. बेरोजगारी और लेबर पाटीर्सीपेसन रेटः CMIE के रिपोर्ट के अनुसार पिछले महीनों में (मई-अगस्त 2022) वृहत बेरोजगारी दर 12.64 प्रतिशत के करीब हो गई है जबकि 2013-14 में बेरोजगारी दर लगभग 4-5 प्रतिशत ही थी (भारत सरकार 2014, Annual Employment & Unemployment Survey 2013-14, Vol. 1)। वर्तमान में 15-65 आयुवाले लोगों की संख्या 107.92 करोड़ है। 2013 में लेबर पाटीर्सीपेसन रेट 55.6 प्रतिशत थी जो मई अगस्त 2022 में घटकर मात्र 39.17 प्रतिशत रह गई है। इस दर (39.17 प्रतिशत) पर मात्र 42.27 करोड़ लोग ही बाजार में अपना योगदान दे रहे हैं। यदि अर्थव्यवस्था का संचालन ठीक ढंग से होता तो (लेबर पाटीर्सीपेसन रेट 55.6 ही मान लिया जाए।) आज 60.00 करोड़ लोग बाजार में कार्यरत बल होते, सवाल उठता है इस बीच 18 करोड़ लोग बाजार से कैसे बाहर हो गए ? वर्तमान में (वृहत बेरोजगारी दर 12.64 पर) कुल 5.64 करोड़ लोग बेरोजगार हैं। यदि इस संख्या में 18 करोड़ और जोड़ दिया जाए तो कुल वास्तविक बेरोजगारों की संख्या 23.64 करोड़ बैठती है। इस प्रकार युवाओं ने पिछले आठ वर्षों में प्रति वर्ष 2. 25 करोड़ रोजगार खोया है। बेरोजगारी पिछले 50 वर्षों में सबसे उच्चतम स्तर पर चली गई है। ऐसा लगता है कि यह ट्रेंड बढ़ता ही जाएगा। यह भारत के भविष्य के लिए बेहद ही खतरनाक होगा। इस प्रकार वर्तमान में बेरोजगारी दर 53% के आस-पास है। महिलाओं की लेबर पाटीर्सीपेसन रेट 2013-14 में 31.1 प्रतिशत थी जो मई-अगस्त 2022 में घटकर 8.43% मात्र रह गई है। लगभग 22-23% महिलाएं मार्केट से बाहर हो गई हैं, यह चिंताजनक है। बढ़ती महंगाई का सामना करना बाजार से बाहर हुई महिलाओं के लिए परेशानी का सबब होगा।

2. पकौडा-अर्थशास्त्र (Pakauda Econmics) : वर्तमान में लगभग 23.64 करोड़ लोग बेरोजगार हैं। पिछले आठ वर्षों में प्रति वर्ष 2.25 करोड़ लोग बाजार से बाहर होते चले गये। भारत के प्रधानमंत्री मोदी (जनवरी 2018) द्वारा कहा गया था कि पकौड़ा बेचना भी एक रोजगार है। तो क्या अगर भारतीयों के पास, रोजगार नहीं है तो सबको पकौड़ा तलना चाहिए? क्या पकौड़े तलना एक रोजगार है? अगर इसका उत्तर हां भी है तो सवाल उठता है कि तब से अब तक तेल और बेसन के दाम दोगुने हो चुके हैं, शहर का किराया, अचल संपत्ति और परिवहन लागत बढ़ती ही जा रही है। क्या भारतवासियों ने इसीलिए भाजपा की सरकार को चुना था कि भारतीय युवाओं को पकौड़ा तलना पड़े, और अमित शाह का बेटा BCCI का सचिव बने? अनुभव से पता चलता है कि मंहगाई के कारण पहले से जो ठेला/दुकानों में पकौड़ा बिकता था वह भी बंद हो गया।

3. विकास एवं संवृद्धिः भारत की आर्थिक संवृद्धि एवं विकास 2014 के पहले औसतन 7 प्रतिशत की दर से बढ़ रही थी जो अब औसतन 5 प्रतिशत के दर से रेंग रही है, यह दर तब है जब आर्थिक संवृद्धि दर के आधार वर्ष को बदला गया ताकि लगभग 2.5 प्रतिशत दर से बढ़ा-चढ़ा कर दिखाया जाए (अरविंद सुब्रमनियन, 2019, वर्किंग पेपर; 354 सीआईडी, यूनिवर्सिटी)। 2021-22 में जीडीपी में बढ़ोतरी (स्थिर मूल्य) 2019-20 की तुलना में मात्र 1.5 ही बढ़ी है और अगर मुद्रास्फीति को ध्यान में रखा जाए तो यह (-) 8.5 प्रतिशत होगी।

उपरोक्त तथ्यों को ध्यान में रखा जाए तो यह कहना अतिशयोक्ति नहीं होगी कि देश पिछले 7-8 वर्षों से 2-3 प्रतिशत की दर से बढ़ रही है। देश में JOB-LESS ग्रोथ हो रहा है, और जिस प्रकार से सार्वजनिक उपक्रमों (रणनीतिक क्षेत्र) को बेचा जा रहा है उससे बेरोजगारी और

हताशा बढ़ेगी।

4. असमानता में वृद्धि: आधुनिक क्लासिकल अर्थशास्त्र के अनुसार, ट्रिकल डाउन प्रभाव / फिलिप्स का सिद्धान्त (Inverse 'U' shape) दिया गया था, जिसके अनुसार अगर देश में आर्थिक संवृद्धि तेज होती है तो इसका लाभ गरीबों और हाशिये के लोगों को मिलेगा,लेकिन ऐसा हो नहीं पा रहा है। फ्रांसीसी अर्थशास्त्री, थॉमस पिकेटी (2013) ने बताया कि असमानता अब लगातार बढ़ रही है। विश्व असमानता रिपोर्ट (2021) के अनुसार, भारत में मात्र उच्च 10 प्रतिशत लोगों के पास देश की 65 प्रतिशत संपत्ति है और उच्च 1 प्रतिशत लोगों के हाथों में 33 प्रतिशत संपत्ति है जबकि निम्न 50 प्रतिशत लोगों के पास मात्र 6 प्रतिशत संपत्ति है।

अब देश में K-Shape वृद्धि हो रही है अर्थात अमीर-अमीर होता जा रहा है और गरीब, गरीब होता जा रहा है। साथ ही अमीर और गरीब लोगों के बीच की खाई बढ़ती जा रही है जो चिंताजनक है। यह स्वाभाविक दशा है क्योंकि आरबीआई, एक इतिहास जानकार चला रहे हैं जिसे अर्थशास्त्रियों के द्वारा चलाया जाना चाहिए।

यहां यह ध्यान रखना होगा कि देश में 1950 के बाद समाजवादी नीतियों के कारण गरीबी और असमानता में कमी आ रही थी जो हाल की आर्थिक नीतियों के कारण बढ़ने लगी है। मोदी सरकार की आर्थिक नीतियों के चलते असमानता द्रुत गति से बढ़ रही है। पिछले 8 वर्षों से देश में असमानता बढ़ने का मुख्य कारंण अडानी-अम्बानी परस्त नीतियां रही है। ऐसा लगता है दो लोग देश चला रहे हैं, दो लोग बेच रहे हैं और दो लोग ही खरीद रहे हैं।

5. देश बेचो योजना : राष्ट्रीय मौद्रीकरण पाइपलाइन :

भारत सरकार द्वारा राष्ट्रीय मौद्रीकरण पाइपलाइन अर्थात देश बेचो योजना तैयार की गई है जिसके अंतर्गत 2024-25 तक देश के सभी महत्वपूर्ण संपत्तियों यथा- सड़कें, परिवहन और राजमार्ग, रेलवे, बिजली, पाइपलाइन और प्राकृतिक गैस, और दूरसंचार, नागरिक उड्डयन, शिपिंग बंदरगाह और जलमार्ग, खाद्य और सार्वजनिक वितरण, खनन, कोयला, आवास और शहरी मामले को बेच देना है या लीज पर दे देना है अर्थात देश को चन्द कंपनियों (अदानी / अम्बानी / आदि) के हाथों में दे देना है और लीज की अवधि 10-50 और अधिक वर्षों के लिए भी हो सकती है। 137 एयरपोर्ट, 1535 मुख्य बंदरगाह, 7325 रेलवे स्टेशन, 126366 किलोमीटर रेलवे ट्रैक, 132499 किलोमीटर राष्ट्रीय हाईवे, 171950 किलोमीटर पॉवर ट्रांसमिशन लाइन, 60224 मेगा वाट थर्मल पॉवर, 4912 मेगा वाट सोलर पॉवर, 69047 टेलिकॉम टावर, 525706 किलोमीटर ऑप्टिकल फाइबर, 19998 किलोमीटर प्राकृतिक गैस पाइपलाइन, 14623 पेट्रोलियम पाइपलाइन, 818 लाख मीट्रिक टन क्षमता का अनाज गोदाम, 5- राष्ट्रीय खेल का मैदान; पृष्ठ संख्या 11 और 12 (National Monetisation Pipeline, Vol. I, NITI Aayog, Government of India)। ये परिसंपत्तियां जब निजी हाथों में आएंगी तो इन्हें हासिल करना गरीब और माध्यम वर्ग के बूते के बाहर हो जाएगी। महंगाई आसमान छूएगी, बेरोजगारी में बेतहाशा वृद्धिं होंगी।

Selling India Project Circulars: वित्त मंत्रालय , Departmentt of Investmentt and Public Asset Management, Office Memorandom No.3/3/2020-DIPAM-II-B दिनांक 4 फरवरी 2021 से स्पष्ट होता है की केंद्र सरकार देश को आत्मनिर्भर बनाने हेतु सार्वजनिक उपक्रमों को प्राइवेट हाथों में दे देगी। यह सर्क्युलर Central Public Sector Enterprises, Public Sector Banks, और Public Sector Insurance Company को बेचने से संबन्धित है। सरकारी व्यावसायिक उपक्रमों को रणनीतिक और गैर-रणनीतिक क्षेत्रों में बांटा गया है। रणनीतिक-राष्ट्रीय सुरक्षा के विषय, ऊर्जा, क्रिटिकल इन्फ्रास्ट्रक्चर, वित्तीय सेवा, मुख्य खनिजों, (परिवहन, परमाणु ऊर्जा, अंतरीक्ष एवं सुरक्षा, दूरसंचार, पैट्रोलियम, कोयला, बैंकिंग, इन्शुरेंस। अब सरकार इन क्षेत्रों में भी अपनी हिस्सेदारी कम करेगी और निजी हाथों में देगी। गैर रणनीतिक क्षेत्रों को पूरी तरीके से बेच दिया जाएगा। यह देश के लिए खतरा उत्पन्न करेगा और देश में विपन्नता को बढ़ावा देगी।

6. केंद्रीय नौकरी की उपलब्धता एवं अवसर : राज्यसभा में अतारांकित प्रश्न (286) के प्रति उत्तर में कहा गया है कि 1 मार्च 2020 तक 8 लाख 72 हजार 243 पद खाली थे। लैटरल एंट्री कई सवालों को लिए खतरा है जो आरक्षण विरोधी, राष्ट्रीय खतरे से संबंधित है। इस नीति के लिए स्पष्ट SoP (Standard of Procedure) का अभाव है। यदि निजी क्षेत्र के लोगों को उच्च पदों पर रखा जा रहा है, यदि वे सरकारी संस्थाओं /उपक्रमों का ध्यान न रखकर निजी क्षेत्र के पक्ष में काम करेंगे तो इसके राष्ट्रीय खतरे हो सकते हैं। सरकार द्वारा तय समय एवं पूर्व शर्तों के अनुसार युवाओं को नौकरी नहीं दिया जा रहा है। हाल में आरआरबी परीक्षा को लेकर उत्तर प्रदेश एवं बिहार में बड़े पैमाने पर छात्र-छात्राएं आंदोलनरत थे। वैसे वर्तमान सरकार के, गरीब-युवा-किसान-मजदूर-बैंककर्मी-छात्र विरोधी, कार्यप्रणाली के कारण कोई भी ऐसा वर्ष नहीं गुजरा है जब कोई न कोई वर्ग सड़क पर आंदोलन ना किया हो। नीति आयोग द्वारा स्ट्रेटजी फॉर न्यू इंडिया @75 दस्तावेज तैयार किया गया है जिसके अनुसार लगभग 60 ऑल इंडिया सर्विसेस को केंद्र से हटाया जा सकता है।

7. केन्द्रीय नौकरियों में विभिन्न सामाजिक वर्गों का प्रतिनिधित्व

विभिन सामाजिक वर्गों का प्रतिनिधित्व

(प्रतिशम में)

	Total	Upper Cas	SC	ST	OBC
Class 1	1.1.2019	63.36	14.4	6.14	16.07
Total	1.1.2019	54.57	17.39	7.64	20.43

नोट: 2019 का आंकड़ा केंद्रीय मंत्रालयों का।

सन्दर्भ: कार्मिक मंत्रालय रिपोर्ट, भारत सरकार।

कार्मिक मंत्रालय रिपोर्ट, भारत सरकार को निम्न आंकड़े अन्य नौ (9) मंत्रालयों के लिए भी जारी करने चाहिए ताकि सामाजिक प्रतिनिधित्व के स्तर का अवलोकन हो सके।

सचिव स्तर की नौकरियों में विभिन्न सामाजिक वर्गों का प्रतिनिधित्व

(प्रतिशम में)

	Total	Upper Cast	SC/ST	OBC
Class 1	सचिव/विशेष सचिव	97.00%	3.00	0.00
	अपर सचिव	85.00%	11.00	4.00
	संयुक्त सचिव	78.00%	10.61	11.83

आंकड़ों से स्पष्ट होता है की केन्द्रीय नौकरियों में आजादी पूर्व से लेकर अब तक पिछड़ी जातियों का प्रतिनिधित्व नगण्य रहा है।

नौकरियों के स्वीकृत पद (मार्च 1, 2022)			
	कुल	कार्यरत	खाली
Class 1	40,04,941	31,32,698	8,72,243

सरकारी नौकरियों में SC/ST, OBC और General जाति के लोगों का प्रतिनिधित्व

Class I			
	SC/ST	OBC	General
मंत्रालय/विभाग	7.18	2.59	90.24
स्वायत संस्थान	6.64	5.1	88.26
सार्वजनिक उपक्रम	4.51	4.59	90.9
कुल	5.68	4.69	89.62

Class II			
	SC/ST	OBC	General
मंत्रालय/विभाग	13.66	3.98	82.36
स्वायत संस्थान	18.16	11.74	70.10
सार्वजनिक उपक्रम	18.74	9.91	71.35
कुल	18.18	10.63	71.19

Class III & IV			
	SC/ST	OBC	General
मंत्रालय/विभाग	30.95	8.41	60.64
स्वायत संस्थान	20.78	20.99	58.23
सार्वजनिक उपक्रम	31.72	15.73	52.55
कुल	24.40	18.98	56.62

Average			
	SC/ST	OBC	General
मंत्रालय/विभाग	16.83	4.83	78
स्वायत संस्थान	18.06	14.43	68
सार्वजनिक उपक्रम	16.99	9.07	74
कुल	18.72	12.54	69

8. गरीबी एवं भूखमरी : स्टेट ऑफ वर्किंग इंडिया रिपोर्ट 2021 के अनुसार, 23 करोड़ लोग पुनः गरीबी रेखा के नीचे धकेल दिये गए हैं। जबकि पहले से ही 27 करोड़ लोग गरीबी रेखा के नीचे थे (वर्ल्ड बैंक रिपोर्ट 2020)। भारत 2013 में वैश्विक भूखमरी इंडेक्स के अनुसार 63 वें स्थान पर था जो ग्लोबल हंगर इंडेक्स (2021) के अनुसार 101 वें स्थान पर आ गया है। भारत में लगभग 20 करोड़ लोग भूखमरी के शिकार हैं। वर्तमान भारत सरकार की दिशाहीन नीतियों के चलते वैश्विक भूखमरी इंडेक्स के अनुसार भारत में भूखमरी लगातार बढ़ती ही जा रही है। Sustainable Global Index के लक्ष्य के अनुसार 2030 तक भुखमरी को शून्य (0) करना है जो लक्ष्य मुश्किल दिख रहा है।

9. मंहगाई : देश में मंहगाई की दर, खाद्यान्न संबन्धित वस्तुओं की काफी अधिक रही है। मंहगाई की मार से गरीब बेहद ही परेशान हैं। फ्इक के अनुसार 2-6% सीमा से ऊपर की मंहगाई दर चिंताजनक होती है। जबकि पिछले वर्ष (2021-22), अंडे की औसत उपभोक्ता मूल्य सूचकांक 9.3 प्रतिशत रही, इसी प्रकार तेल की 30.9 प्रतिशत, जलावन (Fuel) 12.2 प्रतिशत, दाल 7.1 प्रतिशत, फल 7.4 प्रतिशत, मांस 8.2 प्रतिशत। जो RBI द्वारा घोषित चिंताजनक स्तर 5-6 प्रतिशत के ऊपर थी। आर्थिक सर्वेक्षण 2021-22 के अनुसार, मंहगाई का प्रमुख कारण 'fuel' थी। बजट 2022-23 में पेट्रोल पर 2 रुपये प्रति लीटर का अतिरिक्त चार्ज बढ़ाया गया है जिससे आनेवाले दिनों में मंहगाई और बढ़ेगी और देश में भूखमरी भी। 30 सितंबर 2022 को रेपो रेट 50 बेसिस पॉइंट बढ़ाकर 5.90 कर दिया गया। महंगाई की दर 78 से अधिक हो गई है विशेषकर खाद्य पदार्थों का। कमजोर आर्थिक नीति का भार देश के गरीब और मध्यम वर्गों पर पड़ेगा। लोन महंगे हो जाएंगे जिसका गुणात्मक भार महंगाई पर पड़ेगा। पूर्ति-पक्ष अर्थशास्त्र पर अधिक बल देने के कारण महंगाई बेलगाम होते जा रही है। पिछले 8 वर्षों में कुछ चिन्हित वस्तुओं के दाम दो से तीन गुनी हो गई है। जैसे- मार्च 2014 में घरेलू उपभोक्ता सिलिंडर आम लोगों को 410 रुपए में मिल जाता था जो आज 1150 रुपए में मिल रहा है। सरसों तेल 70-80 रुपए प्रति किलो था जो अब बढ़कर लगभग 200 प्रति किलो हो गया है। चावल- आटा की कीमत इस दौरान 2008 से अधिक बढ़ गई हैं। पेट्रोल सितंबर 2022 में क्रूड पेट्रोलियम तेल की कीमत 90.78 $ प्रति बैरल थी जबकि देश में पेट्रोल 110 से 120 प्रति लीटर बिक रहा है, सनद रहे 2014 में पूर्ववर्ती कांग्रेस की सरकार के समय अंतर्राष्ट्रीय बाजार में क्रूड पेट्रोलियम तेल की कीमत 106 $ प्रति बैरल थी और देश में 71-75 रुपए प्रति लीटर पेट्रोल बिक रहा था। पेट्रोल अर्थव्यवस्था का ईंजन है और महंगाई का भी।

10. काला धन : भारतवासियों का स्विस बैंक में 2014 में कुल जमा 14000 करोड़ था जो अब 2022 में बढ़कर लगभग 30000 करोड़ हो गया है।
(https://www.thehindu.com/news/national/indian-money-in-swoss-banks-rise-to-over-rs-14000-cr/article 6130058.ece &
https://www.thehindu.com/news/national/indians-funds-in-swiss-banks-jump-50-to-over-30000-crore/artical65533975.ece
संसद में यह बताया गया था कि पिछले मात्र 5 वर्षों में कुल 10 लाख करोड़ Write-Off कर दिए गए। (https://www.thehindu.com/business/banks-wrote-off-loans-worth-10-lakh-cr-in-last-5--years/artical65716883.ece) ऐतिहासिक है। अर्थात, भाजपा की सरकार ने अमीर पूंजपतियों के हजारों करोड़ का लोन माफ कर दिया है, जिससे अर्थव्यवस्था में महंगाई, बेरोजगारी बढ़ रही है। वर्तमान केंद्र सरकार के कार्यकाल के दौरान कई बैंक दिवालिया हो गए और कई बैंक बंद हो गए जिसके कारण आम लोगों की जमा पूंजी डूब रही है। अर्थव्यवस्था में अविश्वसनीयता का माहौल बना है अब लोग बैंक में पैसा जमा नहीं रखना चाह रहे हैं बजाय अन्य जगहों पर।

11. जन-विरोधी नीतियां

किसान कानून : अंतर्राष्ट्रीय महामारी, कोरोना के बीच 2020 में किसान विरोधी- तीन किसान कानून पारित किए गए, अंततः लगभग 700-800 किसानों के बलिदान लेने के बाद, भारत सरकार द्वारा इसे

निरस्त कर दिया गया। पारित तीनों किसान कानून आवश्यक वस्तु (संशोधन) कानून 2020, कृषक उपज व्यापार और वाणिज्य (संवर्द्धन और सरलीकरण) कानून 2020, और कृषक (सशक्तीकरण व संरक्षण) कीमत आश्वासन और कृषि सेवा पर करार कानून किसान विरोधी, जन-विरोधी, लोकतन्त्र विरोधी, और संविधान विरोधी थे। यह एक काला कानून था जिसकी आड़ में अदानी-अंबानी परस्त आर्थिक नीतियां लागू की जा रही थी जिसके अंतर्गत देश के किसानों की जमीनों पर अंबानी - अदानी और अन्य पूंजीपतियों का कब्जा हो जाता। इसे नाम किसान विधेयक, फायदा पूंजीपतियों का या नरेंद्र मोदी, किसान विरोधी नामों से पुकारा गया। लंबे संघर्ष के बाद किसान विरोधी भारत सरकार द्वारा 'द फार्म लॉ रीपील विधेयक 2021' लाकर सितंबर 2021 में पारित उक्त तीनों कानूनों को निरस्त कर दिया गया।

12 देश आर्थिक संकट के मुहाने पर vs 52 देश पर कर्ज : वर्तमान में कुल विदेशी कर्ज 5 लाख 89 हजार 599 करोड़ है और आंतरिक कर्ज 133 लाख 10 हजार 206 करोड़ है, इस प्रकार कुल कर्ज लगभग 139 लाख करोड़ हो गया है जबकि 2021-22 में स्थिर मूल्य पर जीडीपी मात्र 146 लाख करोड़ थी अर्थात भारत सरकार द्वारा सकल घरेलू अनुपात का लगभग 958 कर्ज देशी/विदेशी बाजार से उठा लिया गया है, पर ब्याज की देनदारी अलग से। 2013-14 में आंतरिक कर्ज जो मात्र 42.40 लाख करोड़ था वह पिछले आठ सालों में बढ़कर 133.10 लाख करोड़ हो गया तीन देश पर लाद दिया गुना कर्ज गया है (www. rbi.org . in)। इस प्रकार प्रत्येक व्यक्ति पर कर्ज अब बढ़कर एक लाख हो गया है। राजकोषीय घाटा बढ़कर अब 6.8 प्रतिशत हो गया है (आर्थिक सर्वेक्षण 2021-22)। 31 मार्च 2023 तक भारत पर अनुमानित कर्ज (आंतरिक+बाह्य) 152.17 लाख करोड़ हो जाएगा। 16 सितंबर 2022 को देश के पास 38.66 लाख करोड़ का विदेशी मूल्य का रिजर्व था। दिशाहीन आर्थिक नीतियां, अदूरदर्शी प्रधानमंत्री इतिहासकार आरबीआई गवर्नर के कारण रुपया लगातार कमजोर होता जा रहा है और लगातार मजबूत होता जा रहा है, 26 सितंबर 2022 को 1 डॉलर का मूल्य 81.57 रुपए के बराबर हो गया? क्या यह मजबूत आर्थिक नीति का प्रतीक है? दिशाहीन मौद्रिक-राजकोषीय नीति के कारण रेपो रेट और रिवर्स रेपो रेट लगातार बढ़ाया जा रहा है ताकि महंगाई काबू में आ सके लेकिन मंहगाई की दर संरचनात्मक कारणों से लगातार बढ़ती ही जा रही है। सार्वजनिक उपक्रमों को लगातार बेचा जा रहा है। देश में आपूर्ति पक्ष अर्थशास्त्र पर अधिक बल दिया जा रहा है जबकि दूसरी ओर राजकोषीय खर्च बढ़ता जा रहा है? यह अर्थव्यवस्था में हस्तक्षेप करने की सरकार की क्षमता को कमजोर बनाती है। एक ओर सरकार की मैक्रो नीतियां गरीबों को हाशिये पर ले जा रही है और दूसरी ओर माइक्रो नीतियां उनके जीवन यापन को उठाना चाह रही है। यह कोई मजबूत समाधान नहीं हो सकता है क्योंकि एक ओर यह राजकोषीय घाटा को बढ़ाता है। ऐसा आपूर्ति पक्ष अर्थशास्त्रियों का मानना है।

13 मानव विकास सूचकांक : मानव विकास सूचकांक (2021) भारत का रैंक नीचे 132 पर आ गया है, जबकि 2014 में यह रैंक 130 पर था। ह्यूमन फ्रीडम इंडेक्स (2013) भारत का रैंक 90 था जो अब 2021 नीचे 119 पर आ गया है। प्रेस फ्रीडम इंडेक्स (2013) भारत का रैंक 79 था जो अब 2022 में नीचे 150 पर आ गया है। भूखमरी इंडेक्स (2013) भारत का रैंक 79 था जो अब 2022 में नीचे 101 पर आ गया है। अर्थात, पिछले आठ वर्षों में देश में मानव का विकास उस गति से भी नहीं हो रहा है जैसा कि पूर्व में हो रहा था।

14 इलेक्टोरल (चुनावी) बॉन्ड: देश में अगर मनरेगा में कोई मजदूर काम करता है तो उसका रजिस्टर रोल तैयार होता है जिसमें उस व्यक्ति का नाम-पता सहित पूरा ब्योरा होता है, जबकि मजदूरी 200 रुपया मिलता है। तो क्या 10 करोड़ के इलेक्टोरल (चुनावी) बॉन्ड खरीदने वाले का नाम, पता का ब्योरा दर्ज नहीं होना चाहिए?

इलेक्टोरल (चुनावी) बॉन्ड एक ऐसा हथियार है जिससे बड़ी-बड़ी कंपनियां अपनी पहचान उजागर किय बिना हजारों करोड़ का धन राजनीतिक दलों को मुहैया करा सकती हैं। इलेक्टोरल (चुनावी) बॉन्ड खरीदने पर उन्हें इन्कम-टैक्स में छूट प्राप्त होता है। 20 हजार से अधिक नकद चन्दा प्राप्त होने पर संबन्धित पॉलिटिकल पार्टी को चुनाव आयोग को ब्योरा देना था। परन्तु एक प्रावधान रखा गया कि यदि कोई दाता चुनावी इलेक्टोरल (चुनावी) बॉन्ड खरीदता है तो ऐसा वह अपना नाम-पता उजागर किये बिना भी कर सकता है। इसे वैधानिक रूप देने के लिए RBI एक्ट के खंड 31 (3) में जोड़ा गया कि कमर्शियल बैंक अब इलेक्टोरल (चुनावी) बॉन्ड केन्द्र सरकार के दिशा-निर्देश पर जारी कर सकते हैं। ने अपने पत्र DCM. (Pig) No. 2906/10.27.00/2016-17 January 30, 2017 में वित्त मंत्रालय को लिखा कि यह एक गैर-संप्रभु कदम होगा, यह बैंकिंग कानून के मूलभूत सिद्धांतों के खिलाफ होगा, एक गलत परम्परा की शुरूआत होगी, चुनावी पारदर्शिता प्रभावित होगी, कौन राष्ट्रीय पार्टी को चन्दा दे रहा है इसका पता नहीं लग पाएगा, मनी लॉन्ड्रिंग एक्ट के प्रावधानों का खुला उल्लंघन होगा। RBI ने अपने पत्र में यह भी लिखा कि चुनावी बांड हेतु डिमांड ड्राफ्ट, चेक, इलेक्ट्रॉनिक/ डिजिटल ट्रांसफर को मान्यता दी जानी चाहिए। चुनाव आयोग ने अपने पत्र No. 76/PPEMS/Transparency/2017, Subject : Amendment in Finance Act 2017 में लिखा कि धारा 29 (C)-Representation of the People Act 1951 जो 'राजनीतिक दलों द्वारा प्राप्त चंदे की घोषणा के विवरण' से सम्बंधित है, में संशोधन करना Retrograde step (पतित कदम) होगा।

RBI एवं चुनाव आयोग द्वारा आपत्ति दर्ज कराई गई लेकिन सभी आपत्तियों को दरकिनार कर रिजर्व बैंक ऑफ इण्डिया के नियमों, बैंकिंग सिद्धांतों, चुनाव आयोग की चिंताओं को अनदेखा कर दिया गया। इस कदम ने भारत की राजनीतिक व्यवस्था में बड़े व्यावसायिक घरानों के प्रभाव को वैध कर दिया और भारतीय राजनीति में काले धन और विदेशी पैसे के अबाध प्रभाव का द्वार खोल दिया। इस व्यवस्था के पहले जो भी चन्दा कंपनियों को इसका ब्योरा अपने वही खाते में दिखाना होता था। मार्च 2018 में हुई इलेक्ट्रॉल बांड की पहली बिक्री में ही बीजेपी को 95 प्रतिशत से अधिक चन्दा मिला। प्रधानमंत्री कार्यालय ने वित्त मंत्रालय को कर्नाटक, छत्तीसगढ़, मध्य प्रदेश, मिजोरम और राजस्थान में महत्वपूर्ण चुनावों से ठीक पहले अपने ही नियमों को तोड़ते हुए इलेक्टोरल बॉन्ड की अवैध बिक्री की अनुमति देने का आदेश दिया। हालांकि ऐसा प्रतीत होता है कि इलेक्टोरल बॉन्ड पर एक गुप्त संख्या होती है जिससे एक हद तक पता लगाया जा सकता है कि किसके द्वारा और किसको यह चन्दा मिला, लेकिन यह सीबीआई/ईडी को ही जानकारी प्राप्त हो सकती हैं। जिसका वेजा इस्तेमाल केंद्र सरकार कर सकती है और विपक्ष में चन्दा देने वाले व्यक्ति और संस्था को प्रताड़ित कर सकती है। काला धन लाने वाली सरकार अब काला धन स्वयं ले रही है, काला धन के स्वामित्व को उजागर करने की घोषणा करने वाली सरकार अब स्वयं उनके नाम कानून बनाकर छुपा रही है। यह लोकतंत्र को खत्म कर देगा।

(पार्टी की राष्ट्रीय कार्यकारिणी सभा में श्याम रजक द्वारा पढ़ा गया पर्चा।)

■

डॉ. दिनेश पाल

उदय नारायण चौधरी : इमामगंज का उदय

इलाज के लिए सिंगापुर जाने से ठीक पहले राष्ट्रीय जनता दल के राष्ट्रीय अध्यक्ष लालू प्रसाद यादव ने 85 सदस्यीय राष्ट्रीय कार्यकारिणी की घोषणा की है जो कि 15 नम्बर, 2022 से प्रभावित मानी जा रही है। इस कार्यकारिणी में कई नये चेहरे शामिल किए गए हैं जिसमें लगभग सभी समूह के लोग शामिल है। राष्ट्रीय अध्यक्ष ने चार वरिष्ठ नेताओं को उपाध्यक्ष की जिम्मेदारी सौंपी है जिसमें चौथा नाम पूर्व बिहार विधानसभा अध्यक्ष उदय नारायण चौधरी का भी है। 70 वर्षीय उदय नारायण बिहार के वरिष्ठ नेता हैं। विदित हो कि जब लालू प्रसाद यादव पहली बार 10 मार्च, 1990 को बिहार के मुख्यमंत्री बने थे तब अपनी कैबिनेट में उदय नारायण चौधरी को 12 दिसम्बर, 1990 को गृह व कारा मंत्री बनाया था परंतु 15 जुलाई, 1991 को इन्होंने बड़े मंत्रिमंडल की बजाय छोटा मंत्रिमंडल रखने हेतु नैतिकता के आधार पर त्यागपत्र दे दिया था।

उदय नारायण चौधरी : दलित राजनीति के समर्पित पक्षकार

सिद्धांत और व्यवहार में समानता

बुद्धिजीवियों तथा नेताओं में कई बार देखा जाता है कि उनके सिद्धांत और व्यवहार में समानता का घोर अभाव होता है। अधिकांशतः मंच पर माइक पकड़ कर ललकारने वालों को निजी जीवन में मिमियाते हुए देखा गया है। क्रांतिकारी व प्रगतिशील विचार मात्र से ही सुंदर समाज का निर्माण नहीं हो सकता है, उसके लिए व्यवहार में भी उतारना होता है। उदय नारायण चौधरी के सिद्धांत और व्यवहार में समानता साफ देखने को मिलती है, वे अर्जक पद्धति को अपनाकर प्रगतिशील विचारों के साथ जीवनयापन करते हैं। वे उन नेताओं में से नहीं हैं जो कलाई में कलेवा बांधकर, अंगुलियों में अंगुठियां पहनकर एवं माथे पर तिलक लगाकर ब्राह्मणवाद की निंदा करें, जैसा कि अधिकांश बहुजन नेता करते हुए दिख जाते हैं। अंधविश्वास, जादू-टोना, बाह्याडम्बर, कर्मकांड एवं ईश्वरीय शक्ति को रत्ती भर भी महत्व नहीं देते हैं। ब्राह्मणवाद व मनुवाद पर बेबाकी से अपनी बात रखते हैं। अभी हाल ही में जब दिल्ली में मंत्री राजेन्द्र पाल गौतम द्वारा 22 प्रतिज्ञाएं लेने पर दक्षिणपंथी लोग हो-हल्ला कर रहे थे तब ये राजेंद्र पाल गौतम के साथ खड़े थे और पत्रकार (यूट्यूबर) वेद प्रकाश के चैनल पर 22 अक्टूबर, 2022 को गौतम को बधाई देते देखे गए। इन्होंने यह भी कहा कि बिहार में भी ऐसा कार्यक्रम होने की सुगबुगाहट हो रही है।

पारिवारिक पृष्ठभूमि

बिहार के पटना जिला में मसौढ़ी अंतर्गत संघतपर गांव में कमल नारायण चौधरी तथा उर्मिला देवी के अत्यंत साधरण घर-परिवार में 08 अगस्त, 1952 को उदय नारायण चौधरी का जन्म हुआ। कमल नारायण चौधरी एक स्वतंत्रता सेनानी और सामाजिक कार्यकर्ता के रूप में चर्चित थे। स्कूली शिक्षा श्रीमती गिरिजा कुंवर उच्च विद्यालय, मसौढ़ी से हुई तथा स्नातक की पढ़ाई पटना विश्वविद्यालय, पटना से। उदय नारायण चौधरी ने स्नातक में प्रतिष्ठा का विषय राजनीति शास्त्र को चुना था। ये हिन्दी तथा अंग्रेजी के साथ-साथ बिहारी भाषा व बोली मगही, मैथिली एवं भोजपुरी तीनों में प्रवीण हैं। इन्होंने 1980 में राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद (NCERT) में परियोजना पदाधिकारी के रूप में भी काम किया है। इनकी पत्नी का नाम बेरोनिका चौधरी था, जो अब इस दुनिया में नहीं हैं। इनकी एक पुत्री डॉ. विद्या ज्योति डॉक्टर हैं और उसके पति अर्थात उदय नारायण के दामाद डॉ. संजय कुमार सरोज भी डॉक्टर हैं। पुत्र कैप्टन ज्ञान प्रकाश, पायलट हैं तो दूसरी पुत्री श्वेता लता, सोशल एक्टविस्ट। इनके घर में अंतरजातीय विवाह को भी सहर्ष स्वीकृति दी गई है, जो कि इनकी प्रगतिशीलता का परिचायक है।

राजनीतिक सफर

विश्वविद्यालय को विचारों का नर्सरी माना जाता है। विश्वविद्यालय में विद्यार्थी अगल-अलग विचार के लोगों से रू-ब-रू होते हैं और फिर अपने पसन्द का विचार चुनते हैं और अपनी वैचारिक यात्रा की शुरूआत करते हैं लेकिन कुछ व्यक्तिगत लाभ व स्वार्थ के लिए समय-समय पर विचारों को भी बर्तनों की तरह बदलते रहते हैं, लेकिन वैसे लोगों का वैचारिक समाज में कोई वजूद नहीं होता है। विश्वविद्यालय में कई छात्र राजनीति में भी रुचि रखने लगते हैं और फिर राजनीति के ही यात्री बन जाते हैं। बिहार में छात्र राजनीति से मुख्य राजनीति की यात्रा करने वाले नेताओं की लंबी फेहरिस्त रही है। उन्हीं नेताओं की श्रृंखला में उदय नारायण चौधरी भी शामिल हैं। पटना विश्वविद्यालय के छात्र संघ चुनाव में समाज सेवा समिति के सदस्य निर्वाचित हुए थे। उदय नारायण चौधरी बिहार में 1974-75 के ऐतिहासिक छात्र-संग्राम के भी गवाह रहे हैं। 'पटना छात्र संघर्ष समिति' से जुड़कर इन्होंने छात्र-राजनीति में सक्रिय भूमिका निभाई थी। लोकनायक जयप्रकाश नारायण ने उस समय छात्रों में ऐसा जोश भरा कि लगभग सभी छात्र नेता उनके शिष्य बन गए और धीरे-धीरे सब मुख्यधारा की राजनीति में शामिल हो गए। लोकनायक द्वारा सम्पूर्ण क्रांति के आह्वान ने तो सभी को झकझोर दिया था और आम जनता के साथ-साथ छात्र नेताओं के दिलोदिमाग में गहराई से असर कर गया था, लेकिन जिस तरह त्वरित प्रभाव में सत्ता का बदलाव हुआ, उसी तेजी से सामाजिक बदलाव नहीं हो पाया।

पहली बार विधायक

बिहार विधानसभा चुनाव 1990 में गया जिले के इमामगंज विधानसभा क्षेत्र से जो कि अनुसूचित जाति के लिए आरक्षित है जनता दल के सिंबल पर उदय नारायण चौधरी ने चुनावी-रण में कदम रखा और जीत हासिल हुई। इमामगंज विधानसभा की जनता ने पांच बार इन्हें जनसमर्थन

दिया। साल 2000 से 2010 तक तो लगातार चार बार इमामगंज से विधायक बनने का मौका मिला, लेकिन उसी इमामगंज की जनता ने 1995, 2015 एवं 2020 के विधानसभा चुनाव में हार भी दिलाई। 2015 में महागठबंधन की सरकार बनने के बाद 2017 में जब नीतीश कुमार पुनः पलटी मारकर भाजपा के साथ एनडीए में चले गए थे तब जदयू के कई नेताओं ने नाराजगी व्यक्त की थी। कुछ तुरंत अलग हो गए तो कुछ बाद में हुए। लगभग दो दशक तक नीतीश कुमार के साथ रहने वाले चौधरी साहब भी जदयू छोड़ राजद में शामिल हो गए। 2014 में जमुई से जदयू के टिकट पर ही लोकसभा का भी चुनाव लड़े लेकिन यहां इन्हें पराजय का सामना करना पड़ा।

30 नवम्बर, 2005 को सर्वसम्मति से बिहार विधानसभा के अध्यक्ष चुने गए दलित समाज से आने वाले वे पहले अध्यक्ष थे। कार्यकारी अध्यक्ष भोला सिंह ने इनके अध्यक्ष बनने पर कहा था कि, 'संसदीय इतिहास में शायद यह पहली घटना है जब सदन के इस सर्वोच्च आसन पर, जो सदन सार्वभौम है, जो सदन बिहार की जनता की आशा और आकांक्षाओं का दर्पण है, जो सदन खुदा की इबादत है, उस आसन पर पहली बार एक दलित अध्यक्ष के रूप में आसीन हुए हैं।' मुख्यमंत्री नीतीश कुमार ने कहा था कि, 'रंगभेद के खिलाफ दुनिया भर में आवाज उठती है और उसके खिलाफ होने वाले सम्मेलनों में आपने भारत का प्रतिनिधित्व किया है, यह गौरव की बात है। आपके इस आसन पर बैठने के बाद सदन में किसी पक्ष के साथ अन्याय नहीं होगा और सबों को सम्मान मिलेगा, अवसर मिलेगा।' 02 दिसम्बर, 2010 को उदय नारायण चौधरी पुनः सर्वसम्मति से दूसरी बार बिहार विधानसभा के अध्यक्ष चुने गए।

सामाजिक समस्याओं से सरोकार

उदय नारायण चौधरी का संबंध बिहार के एक अत्यन्त ही साधारण पासी परिवार से रहा है, परन्तु अपनी वैचारिक प्रतिबद्धता और काम के बल पर बिहार के सामाजिक जीवन में इन्होंने अपनी एक पहचान बनायी है। युवावस्था से ही इन्होंने बिहार के गांवों में वंचितों के बीच रहकर उनके सामाजिक तथा सांस्कृतिक उत्थान के लिए काम करने में लगे रहे। हाशिए के समाज के अनेक बच्चों को शिक्षित किया तथा संविधान में वर्णित अधिकार, समानता एवं न्याय की बातों को बताया। इनके अंदर नेतृत्व क्षमता बचपन में ही विकसित हो गई थी। मात्र 16 साल की उम्र में छात्रों की अगुवाई करते हुए गिरफ्तार हो गए थे। इन्होंने 1968 में श्रीमती गिरिजा कुंवर उच्च विद्यालय, मसौढ़ी में मिट्टी तेल की कालाबाजारी के खिलाफ छात्रों की अगुवाई किया और गिरफ्तार होने के 24 घण्टे बाद रिहा किये गए।

1970 में माता-पिता के साथ पटना आने के बाद मंदिरी मुहल्ले के नाले के किनारे दलितों के लिए 'बेघरों के लिए घर' नामक आंदोलन की अगुवाई तथा इसी समय झोपड़पट्टी के बच्चों को अपनी झोपड़ी में बैठाकर पढ़ाने का सिलसिला शुरू किया ताकि गरीब बच्चों में पढ़ने की आदत विकसित हो जाए। साल 1975 में पटना में आयी भीषण बाढ़ के दौरान इन्होंने मंदिरी मुहल्ले के सैकड़ों बेघर लोगों को पटना कला महाविद्यालय में लाकर उनके भोजन एवं दवा का बंदोबस्त कर उनको बड़ी राहत पहुंचाई। यह काम उन्होंने स्वामी फिलिप मंथरा, वाईस प्रिंसिपल, पटना के सहयोग से किया। स्वामी मंथरा ने इन्हें सोशल एक्टिविस्ट बनाया। इस काम में इन्हें संतजेवियर स्कूल, गांधी मैदान का भी भरपूर सहयोग मिला। 1980 के दशक में पटना के फुलवारीशरीफ में वंचितों की सांस्कृतिक चेतना को जगाने व उसे समृद्ध करने के लिए इन्होंने 'सबरी मेला' का आयोजन शुरू किया। इस मेले की चर्चा देश के बाहर लंदन और फ्रांस तक हुई। लंदन की पत्रकार मीरा हेम्रश ने 'कास्ट बाई बर्थ' नाम से एक डाक्यूमेंटरी बनाई थी। कई सारी पत्र-पत्रिकाओं में लेख लिखे गए। अपने काम को संस्थागत रूप देने के लिए फुलवारीशरीफ में 'प्रयास' नामक संस्था बनाई, जिसके साथ कई उत्साही युवक-युवतियों को जोड़ा। बिहार के साथ ही मध्यप्रदेश के कई आदिवासी नौजवान भी इनके नेक काम में हाथ बंटाने आगे आये। 19, 20 एवं 21 दिसम्बर, 1985 को बिहार में सामाजिक सौहार्द कायम करने के लिए बंधुआ मुक्ति मोर्चा के अध्यक्ष स्वामी अग्निवेश, वरिष्ठ पत्रकार कुलदीप नैय्यर, न्यायमूर्ति वी.एम. तारकुण्डे एवं गांधीवादी पी.बी. राजगोपाल के साथ इन्होंने पुनपुन से जहानाबाद की ऐतिहासिक पदयात्रा का आयोजन किया। बिलासपुर, जबलपुर, जांजगीर, गुमला, पलामू एवं गया जैसे पिछड़े जिलों में सैकड़ों बंधुआ मजदूरों की मुक्ति व पुनर्वास के लिए इन्होंने सार्थक प्रयास किया। इस संदर्भ में 1985-86 में फ्रांस के पत्रकार डेनियल ने 'बॉन्डेड लेबर' नाम से फिल्म बनाई है। सामाजिक जीवन के प्रति इनका यह समर्पण राजनीतिक सक्रियता और जिम्मेवारियों के बावजूद मद्धिम नहीं पड़ा है। इनकी यह यात्रा बिना थके अभी भी जारी है और उम्मीद है कि ये आजीवन जारी रखेंगे।

उदय नारायण चौधरी के संघर्षों की गाथा को विस्तार से डॉ. नरेन्द्र पाठक ने 'बेघरों के घर में' में लिखा है। उनकी जीवनी का लोकार्पण दिल्ली स्थित गांधी शान्ति प्रतिष्ठान में 03 जुलाई, 2015 को शुक्रवार के दिन डॉ. राधा बहन भट्ट ने किया। लोकार्पण समारोह में विशिष्ट अतिथि के रूप में पूर्व सांसद तथा प्रसिद्ध लेखक व पत्रकार कुलदीप नैय्यर और मुख्य अतिथि के रूप में बंधुआ मुक्ति मोर्चा के अध्यक्ष स्वामी अग्निवेश, सांसद पवन कुमार वर्मा, एकता परिषद के संस्थापक राजगोपाल पी.वी. एवं राष्ट्रीय युवा योजना के निदेशक डॉ. एस. एन. सुब्बाराव उपस्थित रहे। कार्यक्रम की अध्यक्षता डॉ. राधा बहन भट्ट ने की थी। उन्होंने अपने अध्यक्षीय सम्बोधन में कहा था कि, 'जो काम उदय ने अपने साथियों के साथ मिलकर किया है, वह महादलितों के लिए मील का पत्थर साबित होगा।' प्रभात प्रकाशन द्वारा प्रकाशित तथा डॉ. पाठक द्वारा संपादित 408 पृष्ठों वाली जीवनी 'बेघरों के घर में' में वर्णित उदय नारायण चौधरी के विचारों व संघर्षों को चंद शब्दों बताना हो तो यही कहा जा सकता है कि अछूत की समस्या का समाधान अछूत जातियों की सांस्कृतिक उन्नति में ही निहित है। जिसकी शुरूआत इन्होंने उनको पाठशाला के करीब लाकर और दारू के अड्डों से दूर ले जाकर की। इनकी दिली इच्छा है कि दलित जातियां इतिहास से भी अपने सवालों के जवाब को ढूंढ़े। आखिर 10 लोगों के लिए 200 बीघा जमीन और 560 लोगों के लिए मात्र 09 कट्ठा ही क्यों है? यह 09 कट्ठा जमीन भी चकबैरिया के मुसहरों को विरासत में नहीं मिली। इसके लिए लंबी लड़ाई लड़ी गई। छोटे दायरे में लड़ी गई ये लड़ाइयां इतिहास में दर्ज होने लायक नहीं हैं, क्योंकि यह किसी राजा-रानी द्वारा लड़ी गई लड़ाई नहीं है। दलित परिवार में जन्में उदय नारायण चौधरी ने मुसहर जातियों के लिए निवासभूमि दिलाने, राशन कार्ड एवं नागरिकता दिलाने के बाद सुअर के बाड़ों से निकालकर उन्हें स्कूल भेजने के लिए निरंतर लड़ा है और आगे भी लड़ते रहने की प्रबल संभावना है।

(लेखक राजद समाचार के सहायक सम्पादक हैं।)

■

जंगबहादुर बेदिल

डॉ. लाल रत्नाकर : ग्राम्य जीवन के कुशल चितेरे

डॉ लाल रत्नाकर : चित्रों में अभिव्यक्ति के कुशल उस्ताद

साहित्य और राजनीति में हमेशा से गहरा सम्बन्ध रहा है, चाहे प्राचीन भारत के राजाओं का राजनीतिक दौर रहा हो या मध्यकालीन मुस्लिम शासकों का राजनीतिक समय। कथा सम्राट प्रेमचंद का तो मानना है कि, 'साहित्यकार देशभक्ति और राजनीति के पीछे चलने वाली सच्चाई नहीं बल्कि उनके आगे मशाल दिखाती हुई चलने वाली सच्चाई है।' बताया जाता है कि एक बार दिल्ली के कवि सम्मेलन में मुख्य अतिथि के रूप में प्रधानमंत्री पंडित जवाहरलाल नेहरू पहुंचे हुए थे। सीढ़ी पर किसी तरह उनका पांव लड़खड़ाया तो रामधारी सिंह 'दिनकर' ने उन्हें संभाल लिया। नेहरू जी ने धन्यवाद बोला तो दिनकर जी ने कहा कि, 'पंडित जी, राजनीति जब भी लड़खड़ाती है तो साहित्य उसे थाम लेता है।' वर्तमान समय में राजनीतिक पार्टियों में साहित्यकारों व चित्रकारों का आभाव-सा हो गया है। कुछ हद तक साहित्यकारों की उदासीनता है तो कुछ राजनेताओं की उपेक्षा। कलाकारों का दिल से सम्मान करने वाले तथा बिहार में दलित-पिछड़ों को स्वर देने वाले राजद प्रमुख लालू प्रसाद ने 85 सदस्यीय राष्ट्रीय कार्यकारिणी में प्रसिद्ध चित्रकार, मूर्तिकार एवं कवि डॉ. लाल रत्नाकर को राष्ट्रीय सचिव बनाकर बड़ा संदेश दिया है।

लाल रत्नाकर जी का जन्म उत्तर प्रदेश के जौनपुर जनपद अंतर्गत बिशुनपुर नामक गांव में 12 अगस्त, 1957 को हुआ। इनके स्मृतिशेष पिता डॉ. रामपति यादव एक चिकित्सक के साथ-साथ किसान भी थे। माता रामरती यादव घर से खेत तक मेहनत करने वाली गृहिणी हैं। संयुक्त व शिक्षित परिवार में इनका लालन-पालन हुआ, जिसके कारण इन्हें बचपन में बहुत लाड़-प्यार-दुलार मिला, लेकिन साथ में कई लोगों की निगरानी और निर्देश से भी गुजरना पड़ा। उस समय सीसीटीवी भले न रहा हो लेकिन संयुक्त परिवार में अभिभावक किसी सीसीटीवी से कम भी नहीं होते थे। बचपन ग्रामीण परिवेश में बीतने के कारण ग्राम्य जीवन इनके दिलोदिमाग में गहराई से बसा हुआ है। इनकी कलाकृतियों में ग्राम्य जीवन इसी कारण सजीव रूप में देखने को मिलता है। अशोक कुमार यादव (गुलाब) तथा अजय कुमार यादव (बजरंगी) इनके दो भाई थे, जिसमें से एक (गुलाब) स्मृतिशेष हो चुके हैं। इनका विवाह बचपन में ही कर दिया गया, पत्नी का नाम केशा यादव है। कुमार संतोष तथा कुमार संदीप इनके दो पुत्र एवं डॉ. श्रद्धा एकलौती पुत्री हैं।

ग्रामीण परिवेश में पले-बढ़े लाल रत्नाकर का परिवार इनकी पढ़ाई-लिखाई को लेकर बहुत चौकन्ना था। स्कूली शिक्षा गांव से अर्जित करने बाद उच्च शिक्षा के लिए गोरखपुर विश्वविद्यालय के चित्रकला विभाग में पढ़ने चले गए, जहां इन्हें कलागुरु जितेंद्र कुमार मिले और कला को जानने-समझने की इनकी शुरूआत हुई। इन्होंने परास्नातक कानपुर विश्वविद्यालय के चित्रकला विभाग से किया। प्रो. आनंद कृष्णा के निर्देशन में 'पूर्वी उत्तर प्रदेश की लोक कला' विषय पर 1985 में काशी हिंदू विश्वविद्यालय, वाराणसी से पीएचडी की उपाधि प्राप्त की। उत्तर प्रदेश के चरण सिंह विश्वविद्यालय, मेरठ से सम्बद्ध एम. एम.एच. कॉलेज, गाजियाबाद के चित्रकला विभाग (ललितकला विभाग) में 01 अक्टूबर, 1992 को असिस्टेंट प्रोफेसर के पद पर योगदान किया। जीविका का स्थायी ठौर मिला तो इनकी चित्रकारीय प्रतिभा में भी निखार आया। पूरे देश में इन्होंने अपनी एक पहचान बनाई। गाजियाबाद शहर के चौक और पार्क इनकी कला के साक्षात गवाह हैं। यह कहना अतिशयोक्ति नहीं होगी कि गाजियाबाद के सौंदर्य में रत्नाकर जी ने अपनी कला से चार चांद लगा दिया है। देश के लगभग सभी प्रतिष्ठित गैलरियों में अनेक बार इनके द्वारा बनाये गए चित्र एकल तथा सामूहिक रूप से प्रदर्शित किए गए हैं। देश-विदेश के विभिन्न निजी एवं प्रतिष्ठित प्रतिष्ठानों में इनकी कलाकृतियां संगृहीत हैं। फारवर्ड प्रेस वाणी प्रकाशन तथा कई अन्य प्रकाशनों से प्रकाशित दर्जनों किताबों के कवर को बनाया है। साथ ही हंस, सबाल्टर्न, अक्षर पर्व एवं वर्तमान साहित्य समेत कई पत्रिकाओं के कवर को भी बनाया है। विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं, पुस्तको, डिजिटल माध्यमों एवं फिल्मों में इनके रेखांकनों एवं कलाकृतियों का प्रदर्शन हुआ है। इतना ही नहीं इन्होंने अनेक चित्र एवं मूर्तिकला कार्यशालाओं का आयोजन भी किया है। उत्तर प्रदेश राज्य ललित कला अकादमी पुरस्कार 2004-05 तथा 2005 में चित्रकला अकादमी,

अमृतसर द्वारा सम्मानित किए जा चुके हैं। सेवानिवृत्ति के उपरान्त कला सृजन, सामाजिक एवं राजनीतिक सरोकारों से निरंतर जुड़े हुए हैं।

डॉ. लाल रत्नाकर के चित्रों के केंद्र में ग्रामीण स्त्रियां खासतौर से होती ही होती हैं। अपनी 'आधी आबादी और मेरे चित्र' शीर्षक लेख में वह लिखते हैं कि, 'दुनिया जिसे आधी आबादी कहती है वही आधी आबादी मेरे चित्रों की पूरी दुनिया बनती है। यही वह आबादी है जो सदियों से सांस्कृतिक सरोकारों को सहेज कर पीढ़ियों को सौंपती रही है, वही संस्कारों का पोषण करती रही है। कितने शीतल भाव से वह अपने दर्द को अपने भीतर समेटे रखती है और कितनी सहजता से अपना दर्द छिपाये रखती है। कहने को वह आधी आबादी है, लेकिन शेष आधी आबादी यानी पुरूषों की दुनिया में उसकी जगह सिर्फ हाशिये पर दिखती है जबकि हमारी दुनिया में दुख-दर्द से लेकर उत्सव-त्योहार तक हर अवसर पर उसकी उपस्थिति अपरिहार्य दिखती है। जहां तक मेरे चित्रों के परिवेश का सवाल है, उनमें गांव इसलिए ज्यादा दिखाई देता है क्योंकि मैं खुद अपने आप को गांव के नजदीक महसूस करता हूं, सच कहूं तो वही परिवेश मुझे सजीव, सटीक और वास्तविक लगता है बनावटी और दिखावटी नहीं। बार-बार लगता है कि हम उस आधी आबादी के ऋणी हैं और मेरे चित्र उऋण होने की सफल-असफल कोशिश भर है। राजेंद्र यादव भी इनके चित्रों के प्रशंसक रहे हैं और वे इन्हें 'जीवन तथा जमीन का चित्रकार' मानते रहे हैं। काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी के पूर्व कुलपति पद्मश्री डॉ. लालजी सिंह तो इनके चित्रों के ग्रामीण थीम पर अभिभूत रहे हैं। प्रसिद्ध पत्रकार एवं साहित्यकार प्रदीप सौरभ ने तो इनकी कला प्रदर्शनी को 'लोक जीवन का रंगोत्सव' कहा है। प्रख्यात चित्रकार अर्पणा कौर इनकी तुलना प्रेमचंद से करते हुए लिखती हैं कि, 'प्रेमचंद ने जिस तरह हिंदी साहित्य में गांव को स्थापित किया, वही काम रत्नाकर कला की दुनिया में अपनी पेंटिंग के सहारे कर रहे हैं।' बीबीसी हिन्दी की पूर्व सम्पादक सलमा जैदी ने लिखा है कि, 'प्रतीक्षारत नारी, कामकाजी स्त्री, फुर्सत के क्षणों में गपशप करती महिलाएं, सभी उनकी कूची के माध्यम से सजीव हो उठती हैं।' इनके चित्र व कला केंद्रित विषय की सराहना कई प्रसिद्ध लेखकों तथा पत्रकारों ने किया है। ऐसे विख्यात चित्रकार का राष्ट्रीय जनता दल की राष्ट्रीय कार्यकारिणी में शामिल होना सुखद है। उम्मीद है अपनी सृजनात्मकता से पार्टी की तरक्की में भी अपना रचनात्मक योगदान करेंगे। राष्ट्रीय कार्यकारिणी में शामिल होने के लिए रत्नाकर जी को बहुत-बहुत बधाई एवं शुभकामनाएं।

(सामाजिक-राजनीतिक गतिविधियों में लेखक की खास दिलचस्पी रहती है।)

■

सीमाब अख्तर

पत्रकार अशरफ अस्थानवी को भुलाना असंभव

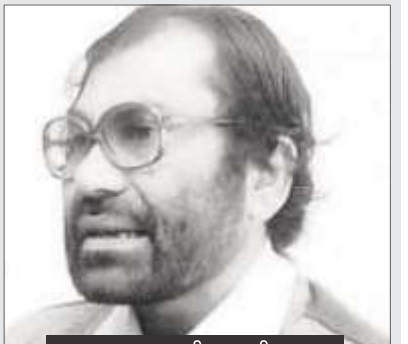

अशरफ अली अस्थानवी

उर्दू अदब के मकबूल पत्रकार

(2 फरवरी 1967-15 नवम्बर 2022)

पत्रकार हमेशा से समाज का आईना रहा है और सच्चाई के साथ इस आईने के मिजाज को बनाने वाले अशरफ अली अस्थानवी लोगों को अपनी यादों के सहारे छोड़ कर चले गए। सत्ता से लेकर सामाजिक मुद्दों को बेखौफ आईना दिखाने वाले अस्थानवी की हैसियत ऐसे पत्रकारों में थी जिन्हें दुनिया सदियों याद रखेगी। उर्दू नफाज कमेटी बनाकर उन्होंने लोगों का ध्यान अपनी ओर खींचा। देश के प्रमुख समाचार पत्रों के साथ-साथ हिंदी पत्रिका ने उनका कॉलम छापा और वह अपनी पहचान बनाते चले गए। उनका असल नाम जियाउल अशरफ था, लेकिन वह अशरफ अस्थानवी से मशहूर हो गए। उनका जन्म 2 फरवरी 1967 को नालंदा जिला के अस्थावां में हुआ। गांव से शिक्षा ग्रहण करने के बाद 1984 में पटना यूनिवर्सिटी और फिर जामिया उर्दू अलीगढ़ से उच्च शिक्षा ली। उनकी पत्रकारिता को इतना सराहा गया कि सरकार की तरफ से उन्हें सम्मानित किया गया। एक रिपोर्टर, संपादक और स्तंभकार के रूप में उनकी पहचान बनी। 1984 से 1986 तक दिल्ली कौमी आवास के लिए क्राइम रिपोर्टर रहे। उसके बाद 1993 तक दैनिक कौमी तंजीम के चीफ रिपोर्टर के तौर पर काम किया। चौथी दुनिया में विशेष संवाददाता की भूमिका निभाई। उन्हें पत्रकारिता के साथ-साथ सामाजिक मुद्दों पर लिखने का बहुत शौक था। 1998 में सदा ए जर्स के नाम से पहली पुस्तक प्रकाशित हुई और फिर 2002 में दूसरा संस्करण उन्होंने लोगों के सामने पेश किया। फारबिसगंज का सच, अल्पसंख्यक पर हुए अत्याचारों की एक ऐसी कहानी है जो 3 जून 2011 को हुई थी। जिसमें पुलिस द्वारा 5 मुस्लिम युवकों की बेरहमी से हत्या कर दी गई थी। इस पर उन्होंने लोगों को वह तस्वीर दिखाई जो शायद किसी ने नहीं देखा होगा उन्हें उर्दू - हिंदी - अंग्रेजी - फारसी और अरबी भाषा पर बहुत मजबूत पकड़ थी। खोजी पत्रकारिता और पुस्तक लेखन के क्षेत्र में उत्कृष्ट योगदान के लिए 14 जुलाई 2013 को राजभवन पटना में आयोजित एक समारोह में महामहिम डॉक्टर डी.वाई पाटिल के द्वारा मैन ऑफ द ईयर पुरस्कार प्रदान किया गया। 1995 में उन्हें गालिब अकादमी पुरस्कार से सम्मानित किया गया। इसके अलावा वे पटना यूनिवर्सिटी के मेंबर रहे। उर्दू के इस मशहूर पत्रकार के देहांत पर सियासी हलके में भी मातम छा गया। कुछ लोगों ने उन्हें हिंदी उर्दू पत्रकारिता का चमकता सितारा बतलाया। श्री अस्थानवी सकारात्मक छाप छोड़ कर गए हैं। उनके लेखन में अनुसंधान परक निर्भीकता बहुत गहरे अनुस्यूत थी। उन्होंने बिहार विधानमंडल के दोनों सदनों की कार्रवाई से संबंधित बहुत बारीक रिपोर्टिंग की थी। उर्दू पत्रकारिता को जीतने वाले अशरफ अस्थानवी लोगों को रोता बिलखते छोड़ कर चले गए, लेकिन उन्होंने अपने पीछे कलम की वह धार छोड़ दी जो आने वाले लोगों के लिए एक नया रास्ता दिखाने का काम करेगी। कभी भी उन्होंने सत्ता से खौफ नहीं खाया और निर्भीक होकर लिखते चले गए। उनके निधन पर मुख्यमंत्री नीतीश कुमार उप मुख्यमंत्री तेजस्वी प्रसाद यादव समेत सियासत के कद्दावर लोगों ने श्रद्धांजलि देते हुए उनकी बेबाक कलम को नमन किया है।

(लेखक उर्दू पत्रकारिता में लंबे समय से सक्रिय हैं।)

■

राम पुनियानी

भारतीय राजनीति के विपरीत ध्रुव हैं आम्बेडकर और सावरकर

इंडियन एक्सप्रेस (3 दिसंबर, 2022) में प्रकाशित अपने लेख नो योर हिस्ट्री में आरएसएस नेता राम माधव लिखते हैं कि राहुल गांधी, आम्बेडकर और सावरकर को नहीं समझते। वे राहुल गांधी द्वारा मध्यप्रदेश के महू में दिए गए भाषण की भी आलोचना करते हैं। आम्बेडकर की जन्मस्थली महू में बोलते हुए राहुल ने कहा था कि आरएसएस आम्बेडकर के प्रति नकली और झूठा सम्मान दिखा रहा है और असल में तो उसने आम्बेडकर की पीठ में छुरा भोंका था। राहुल गांधी को गलत बताते हुए राम माधव, आम्बेडकर के पत्रों और लेखों आदि के हवाले से बताते हैं कि दरअसल गांधी, नेहरू और पटेल जैसे कांग्रेस नेता आम्बेडकर के विरोधी थे। राम माधव ने लिखा कि राहुल गांधी के दावे के विपरीत कांग्रेस ने आम्बेडकर की छाती में चाकू भोंका था। राम माधव ने अपने लेख की शुरूआत संसद में नेहरू के उस भाषण के हिस्सों से की जिसमें वे आम्बेडकर को श्रद्धांजलि दे रहे हैं और इस आधार पर यह दावा किया कि नेहरू आम्बेडकर के प्रति तनिक भी सम्मान का भाव नहीं रखते थे।

माधव ने जानबूझकर नेहरू के भाषण के उन हिस्सों को छोड़ दिया है जिनमें वे आम्बेडकर की भूरि-भूरि प्रशंसा करते हैं। जिस भाग को माधव ने छोड़ दिया है उसमें नेहरू कहते हैं, 'परंतु वे एक घनीभूत भावना का प्रतिनिधित्व करते थे। हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि वे उन दमित वर्गों की भावनाओं के प्रतीक थे जिन वर्गों को हमारे देश की पुरानी सामाजिक प्रणालियों के कारण बहुत कष्ट भोगने पड़े। हमें यह स्वीकार करना ही होगा कि यह एक ऐसा बोझा है जिसे हमें ढोना होगा और हमेशा याद रखना होगा' परंतु मुझे नहीं लगता कि भाषा और अभिव्यक्ति के तरीके के अतिरिक्त उनकी भावनाओं की सच्चाई को कोई भी चुनौती दे सकता है। हम सबको इस भावना को समझना और अनुभव करना चाहिए और शायद इसकी जरूरत उन लोगों को ज्यादा है जो उन समूहों और वर्गों में नहीं थे जिनका दमन हुआ। 'इससे यह साफ है कि नेहरू भारत में सामाजिक परिवर्तन के मसीहा आम्बेडकर का कितना सम्मान करते थे।

आम्बेडकर को यह स्पष्ट एहसास था कि हिन्दू धर्म के आसपास बुना हुआ राष्ट्रवाद प्रतिगामी ही होगा। भारत के विभाजन पर अपनी पुस्तक के दूसरे संस्करण में वे लिखते हैं' अगर हिन्दू राज यथार्थ बनता है तो इसमें कोई संदेह नहीं कि वह भारत के लिए सबसे बड़ी विपदा होगी। हिन्दू धर्म स्वतंत्रता, समानता और बंधुत्व के लिए खतरा है और इसी कारण वह प्रजातंत्र से असंगत है। हिन्दू राज को किसी भी कीमत पर रोका जाना चाहिए।'

गांधीजी और आम्बेडकर के बीच हुए पूना पैक्ट को अक्सर कांग्रेस और आम्बेडकर के बीच कटु संबंध होने के प्रमाण के रूप में उदधृत किया जाता है। जहां अंग्रेज 'बांटो और राज करो' की नीति के अंतर्गत अछूतों को 71 पृथक निर्वाचन मंडल देना चाहते थे वहीं पूना पैक्ट के अंतर्गत उनके लिए 148 सीटें आरक्षित की गईं। यरवदा जेल, जहां आम्बेडकर महात्मा गांधी से मिलने गए थे, वहां दोनों के बीच संवाद उनके मन में एक-दूसरे के प्रति सम्मान के भाव को प्रदर्शित करता है। महात्मा गांधी ने कहा, 'डॉक्टर, मेरी तुम से पूरी सहानुभूति है और तुम

क्रांति और प्रतिक्रांति के दो बड़े प्रतीक : आंबेडकर और सावरकर

जो कह रहे हो उसमें मैं तुम्हारे साथ हूं।' इसके जवाब में आम्बेडकर ने कहा, 'हां महात्मा जी, अगर आप मेरे लोगों के लिए अपना सब कुछ दे देंगे तो आप सभी के महान नायक बन जाएंगे।'

गोलमेज सम्मेलन के पहले आम्बेडकर ने महाड़ चावदार तालाब आंदोलन किया। इस आंदोलन को सत्याग्रह कहा गया जो कि प्रतिरोध का महात्मा गांधी का तरीका था। मंच पर केवल एक फोटो थी जो कि महात्मा गांधी का था। यहीं पर मनुस्मृति की प्रति भी जलाई गई। यह वही मनुस्मृति है जिसकी प्रशंसा में सावरकर और गोलवलकर ने जमीन-आसमान एक कर दिया था। सावरकर और गोलवलकर, माधव के विचारधारात्मक पूर्वज हैं। मनुस्मृति के बारे में सावरकर ने लिखा 'मनुस्मृति एक ऐसा ग्रंथ है जो वेदों के बाद हमारे हिन्दू राष्ट्र के लिए सर्वाधिक पूजनीय है। यह ग्रंथ प्राचीनकाल से ही हमारी संस्कृति और परंपरा तथा आचार-व्यवहार का आधार रहा है। यह पुस्तक सदियों से हमारे देश के आध्यात्मिक जीवन की नियंता रही है। आज भी करोड़ों हिन्दुओं द्वारा अपने जीवन और व्यवहार में जिन नियमों का पालन किया जाता है, वे मनुस्मृति पर ही आधारित हैं। आज भी मनुस्मृति हिन्दू विधि है। यह बुनियादी बात है।'

यह सही है कि आम्बेडकर ने पतित पावन मंदिर के दरवाजे सभी के लिए खोलने और अंतरजातीय सहभोजों को प्रोत्साहन देने के लिए सावरकर की प्रशंसा की थी। परंतु इसे मनुस्मृति के प्रति सावरकर की पूर्ण प्रतिबद्धता के संदर्भ में देखा जाना चाहिए। सावरकर के ये दो सुधार उनके व्यक्तिगत प्रयास थे। उनके सचिव ए.एस. भिड़े ने अपनी पुस्तक विनायक दामोदर सावरकर्स वर्लविंड प्रोपेगेंडा में लिखा है कि सावरकर ने इस बात की पुष्टि की थी कि उन्होंने ये काम अपनी निजी हैसियत से किए हैं और वे इनमें हिन्दू महासभा को शामिल नहीं करेंगे। जहां तक मंदिरों में अछूतों के प्रवेश का प्रश्न था, उसके बारे में लिखते हुए सावरकर ने 1939 में कहा कि 'हम पुराने मंदिरों में अछूतों इत्यादि को आवश्यक रूप से प्रवेश की इजाजत देने से संबंधित किसी कानून का न तो प्रस्ताव करेंगे और ना ही उसका समर्थन करेंगे। अछूतों को वर्तमान परंपरा के अनुरूप उस सीमा तक ही प्रवेश की इजाजत दी जा सकती है जिस सीमा तक गैर-हिन्दू प्रवेश कर सकते हैं।' माधव को शायद याद नहीं है कि आम्बेडकर ने सावरकर और जिन्ना की तुलना करते

हुए लिखा था कि 'यह अजीब लग सकता है परंतु सच यही है कि एक राष्ट्र बनाम दो राष्ट्र के मुद्दे पर एक-दूसरे के विरोधी होते हुए भी दरअसल मिस्टर सावरकर और मिस्टर जिन्ना इस मुद्दे पर पूर्णतः एकमत हैं। वे न केवल एकमत हैं वरन जोर देकर कहते हैं कि भारत में दो राष्ट्र है 'हिन्दू राष्ट्र और मुस्लिम राष्ट्र।'

जहां तक आम्बेडकर को देश की पहली केबिनेट में शामिल किए जाने का प्रश्न है, माधव का कहना है कि जगजीवनराम के जोर देने पर आम्बेडकर को मंत्रिमंडल में शामिल किया गया था। सच यह है कि नेहरू और गांधी दोनों का यह दृढ़ मत था कि आजादी कांग्रेस को नहीं वरन पूरे देश को मिली है और इसलिए पांच गैर-कांग्रेसियों को मंत्रिमंडल में शामिल किया गया था। गांधीजी न केवल चाहते थे कि आम्बेडकर केबिनेट का हिस्सा बनें वरन वे यह भी चाहते थे कि आम्बेडकर संविधानसभा की मसविदा समिति के मुखिया हों।

माधव के पितृ संगठन आरएसएस ने नये संविधान की कड़ी आलोचना की थी। संविधान पर तीखा हमला बोलते हुए संघ के मुखपत्र आर्गनाईजर के 30 नवंबर 1949 के अंक में प्रकाशित संपादकीय में कहा गया था 'परंतु हमारे संविधान में प्राचीन भारत की अद्वितीय संवैधानिक विकास यात्रा की चर्चा ही नहीं है। स्पार्टा के लाइकरर्जस और फारस के सोलन से काफी पहले मनु का कानून लिखा जा चुका था। आज भी दुनिया मनुस्मृति की तारीफ करती है और वह सर्वमान्य व सहज स्वीकार्य है। परंतु हमारे संविधान के पंडितों के लिए इसका कोई अर्थ ही नहीं है।'

आम्बेडकर को उनके द्वारा तैयार किए गए हिन्दू कोड बिल को कमजोर किए जाने से गहरी चोट पहुंची थी। कांग्रेस के भी कुछ तत्व इसके खिलाफ थे परंतु मुख्यतः आरएसएस के विरोध के कारण हिन्दू कोड बिल के प्रावधानों को कमजोर और हल्का किया गया। इससे इस महान समाज सुधारक को गहन पीड़ा हुई और अंततः उन्होंने इसी मुद्दे पर मंत्रिपरिषद से इस्तीफा दे दिया।

आम्बेडकर को यह स्पष्ट एहसास था कि हिन्दू धर्म के आसपास बुना हुआ राष्ट्रवाद प्रतिगामी ही होगा। भारत के विभाजन पर अपनी पुस्तक के दूसरे संस्करण में वे लिखते हैं 'अगर हिन्दू राज यथार्थ बनता है तो इसमें कोई संदेह नहीं कि वह भारत के लिए सबसे बड़ी विपदा होगी। हिन्दू धर्म स्वतंत्रता, समानता और बंधुत्व के लिए खतरा है और इसी कारण वह प्रजातंत्र से असंगत है। हिन्दू राज को किसी भी कीमत पर रोका जाना चाहिए।' आम्बेडकर जाति के विनाश के हामी थे जबकि आरएसएस ने विभिन्न जातियों के बीच समरसता को प्रोत्साहन देने के लिए सामाजिक समरसता मंच की स्थापना की है। आज राम माधव की संस्था भले ही आम्बेडकर की मूर्तियों पर माल्यार्पण कर रही हो परंतु राहुल गांधी ने जो कहा है वह तार्किक है। हमें इतिहास का अध्ययन तर्क और तथ्यों के आधार पर और सभी परिस्थितियों व स्थितियों को समग्र रूप से देखते हुए करना चाहिए। इतिहास के कुछ चुनिंदा हिस्सों के आधार पर और मूलभूत तथ्यों को नजर अंदाज कर हम किसी का भला नहीं करेंगे।

राम पुनियानी देश के जाने-माने जनशिक्षक और वक्ता हैं। आईआईटी मुंबई में पढ़ाते थे और सन 2007 के नेशनल कम्यूनल हामोर्नी एवार्ड से सम्मानित हैं।

(अंग्रेजी से रूपांतरण अमरीश हरदेनिया)

■

डॉ. दिनेश पाल

बिहार में ट्रांसजेंडर के लिए सरकार की सराहनीय पहल

बिहार सरकार के शिक्षा विभाग द्वारा 29 नवम्बर, 2022 को एक पत्र जारी किया गया है, जिसमें डॉ. रेखा कुमारी, निदेशक, उच्च शिक्षा द्वारा बिहार के सभी विश्वविद्यालयों/महाविद्यालयों को निर्देशित किया गया है कि उभयलिंगी व्यक्ति (अधिकारों का संरक्षण) अधिनियम, 2019 के तहत ट्रांसजेंडर व्यक्तियों के अधिकारों की रक्षा सुनिश्चित किया जाए। विदित हो कि बिहार में मुख्यमंत्री सहायता कोष से ट्रांसजेंडर को लिंग परिवर्तन हेतु ऑपरेशन के लिए डेढ़ लाख आर्थिक सहयोग के रूप में मुहैया कराया जाता है और इसका सकारात्मक असर भी दिखने लगा है। अभीतक बिहार में इस योजना के तहत 47 ट्रांसजेंडरों ने लिंग परिवर्तन कराया है, जिसमें से 29 मात्र पटना के हैं। जिसमें 'ट्रांससेक्सुअल मैन' या 'फीमेल टू मेल' तथा 'ट्रांससेक्सुअल वुमेन' या 'मेल टू फीमेल' दोनों हैं। देश में राजस्थान लिंग परिवर्तन अथवा सेक्स रिअसाइमेन्ट के लिए आर्थिक सहयोग करने वाला पहला राज्य है, वहां सरकार की तरफ से 2.5 लाख रुपये की मदद की जाती है। केंद्र सरकार के आयुष्मान कार्ड के अंतर्गत 5 लाख तक देने का प्रावधान है, लेकिन पेचीदगियों के कारण अधिक लोग लाभ नहीं ले पा रहे हैं।

मालूम हो कि बिहार सरकार द्वारा सीधी सिपाही भर्ती में प्रति 500 सिपाही/दारोगा पर एक ट्रांसजेंडर को बहाल करने की नियमावली बनाई गई है। वह दिन दूर नहीं है जब बिहार में ट्रांसजेंडर को थाना अध्यक्ष के रूप में जनता देखेगी और और वह दिन किन्नर समुदाय के साथ-साथ पूरे समाज के लिए सुखद होगा। हाल ही में मद्य निषेध, उत्पाद एवं निबंधन विभाग में 'मद्य निषेद सिपाही' की भर्ती आयी थी, जिसका विज्ञापन संख्या 02/2022 था। विज्ञापन में आरक्षण के अंतर्गत बिहार राज्य के किन्नर/कोथी/हिजड़ा/ट्रांसजेंडर (थर्ड जेण्डर) के लिए प्रावधान किया है कि, 'बिहार पदों एवं सेवाओं की रिक्तियों में आरक्षण (अनुसूचित जातियों, अनुसूचित जन जातियों एवं अन्य पिछड़े वर्गों के लिए) अधिनियम, 1991 की पिछड़े वर्गों की सूची (अनुसूची-2) के क्रमांक-47 पर किन्नर/कोथी/हिजड़ा/ट्रांसजेन्डर (थर्ड जेन्डर) को स्वतंत्र रूप से शामिल किया गया है। बिहार सरकार, सामान्य प्रशासन विभाग का संकल्प संख्या 12722, दिनांक 12 सितम्बर, 2014 के अनुसार किन्नर/कोथी/हिजड़ा/ट्रांसजेन्डर (थर्ड जेन्डर) व्यक्तियों को राज्य सरकार की सेवाओं में पिछड़े वर्गों को मिलने वाले आरक्षण का लाभ मिलेगा।' यदि ट्रांसजेंडर उम्मीदवार नहीं मिलेंगे तो उस पद पर पिछड़ा वर्ग (BC) के सामान्य अभ्यर्थी को बहाल किया जाएगा। आरक्षण सिर्फ बिहार के निवासियों को ही मिलता है इसलिए ट्रांसजेंडर को निवास प्रमाण पत्र बनवाना पड़ेगा जो कि एक प्रकार की चुनौती ही है। बिहार सरकार को सभी ट्रांसजेंडर को डिस्ट्रिक्ट मजिस्ट्रेट द्वारा पहचान पत्र जारी करना चाहिए और इनके लिए निवास प्रमाण पत्र भी निवास स्थान के आधार पर जारी करना चाहिए। बिहार में स्त्री-पुरूष के संबंध में निवास प्रमाण पत्र पिता के

ट्रांसजेंडर : सम्मान की लड़ाई का समवेत हर्षोलाश भरा स्वर

नाम का चाहिए होता है और ट्रांसजेंडर के साथ समस्या है कि उनमें से कई को बचपन में ही किन्नर जबरी उठाकर अपने डेरा पर ले जाते हैं तो कुछ हैं कि अपने आसपास के समाज और परिवार की उपेक्षापूर्ण रवैया के कारण घर-परिवार छोड़कर डेरा चले जाते हैं। उस स्थिति में सरकार किस आधार पर निवास प्रमाण पत्र जारी करेगी, क्या डेरा प्रमुख व गुरु को उनका अभिभावक मानेगी। मुझे लगता है उनके डेरे को निवास स्थान मान लेना चाहिए क्योंकि घर छोड़ने के बाद कई ट्रांसजेंडर अपने घर नहीं लौटना चाहते हैं और कुछ के घर-परिवार वाले भी नहीं चाहते हैं कि वो उनके यहां लौटें या मिलने आएं। परिवार को समाज से डर होता है, उन्हें लगता है कि दूसरे बच्चों की शादी नहीं हो पाएगी। सरकार को जागरुकता अभियान चलाना चाहिए ताकि स्त्री-पुरुष एवं ट्रांसजेंडर के बीच की दूरियां खत्म हों। 2011 की जनगणना के अनुसार देश में करीब 5 लाख ट्रांसजेंडर हैं जिसमें से लगभग 41 हजार सिर्फ बिहार में हैं। बिहार में स्वयं सहायता समूह से भी ट्रांसजेंडर को जोड़कर रोजगार हेतु 50 लाख का बजटीय प्रावधान किया गया। बिहार सरकार के समाज कल्याण विभाग द्वारा 'ट्रांसजेंडर कल्याण बोर्ड' का गठन 2015 में ही किया गया लेकिन उसका बहुत सकारात्मक परिणाम देखने को नहीं मिलता।

बिहार सरकार द्वारा सिपाही भर्ती में ट्रांसजेंडर-आरक्षण लागू करने से पहले ही 23 वर्षीय 'रचित राज' को पुलिस बनने का संयोग बना। सम्भवतः वह बिहार ही नहीं बल्कि देश के पहले ट्रांसजेंडर सिपाही थे, जिनकी ट्रेनिंग पोस्टिंग कैमूर के एसपी कार्यालय के गोपनीय शाखा में हुई थी लेकिन अफसोस की बात है कि वह दो माह भी वहां सेवा नहीं दे पाये होंगे कि एक दुर्घटना में उनकी मृत्यु हो गई। 01 नवम्बर, 2021 को भभुआ रोड रेलवे स्टेशन क्रासिंग के पास रेलवेलाइन क्रॉस करते समय ट्रेन से कटकर मृत्यु हो गई। रचित राज ने अपनी पढ़ाई 'रचना कुमारी' के नाम से किया था, लेकिन पुलिस भर्ती से पहले ही वह 'रचित राज' बन चुके थे और पुरुष वर्ग से आवेदन करके बहाल हुए। उन्होंने एक इंटरव्यू में कहा था कि, 'ट्रांसजेंडर संरक्षण अधिनियम, 2019 के अनुसार कोई भी ट्रांसजेंडर अपनी पहचान प्रकट कर सकता है। बिहार में ट्रांसजेंडर सर्टिफिकेट लेने की कोई जगह नहीं है। साथ ही मैं अपने शैक्षणिक प्रमाण पत्रों में अपनी भौतिक पहचान को बदलने में असमर्थ हूं। लिंग कॉलम में मेरे लिंग को प्रमाण पत्रों में महिला के रूप में रखा गया है।'कई परिवार के लोग अपने ट्रांसजेंडर बच्चे को साथ रखते भी हैं तो उसे लड़की या लड़के के रूप में रखते हैं लेकिन धीरे-धीरे आसपास के लोग उस बच्चे को एहसास करा देते हैं कि नहीं तुम हमसे अलग हो और उनके साथ उपेक्षापूर्ण व्यवहार करने लगते हैं। महाराष्ट्र की पहली तथा भारत की दूसरी अधिवक्ता डॉ. पवन यादव जिन्हें 'डॉक्टरेट' की मानद उपाधि भी मिली हुई है, उन्होंने भी अपनी बीएससी तक की शिक्षा स्त्री के रूप में ही लिया है। एलएलबी के नामांकन में उन्होंने ट्रांसजेंडर विकल्प चुना लेकिन नामांकन के बाद भी उन्होंने अपने कॉलेज में खुद को स्त्री के रूप में ही प्रस्तुत किया क्योंकि उन्हें डर था कि ट्रांसजेंडर मालूम चलने पर लोग तंग करेंगे और पढ़ाई-लिखाई के बीच परेशानियों का भी सामना करना पड़ सकता है। पुरुषवादी समाज में कुछ वेहाये किस्म के लोग ट्रांसजेंडर को लावारिस सामान समझने लगते हैं और उन्हें लगता है कि इनके साथ कुछ भी करो कोई बोलने वाला नहीं है। इस बेहयापन से मुक्त करने के लिए व्यापक जागरूकता अभियान की दरकार है। मानोबी वंद्योपाध्याय शिक्षिका के रूप में कॉलेज में पढ़ाने गईं, तब भी वहां के शिक्षक और शिक्षक के पाले हुए दो गुण्डे उन्हें तंग कर रहे थे। मानोबी वंधोपाध्याय भारत की पहली ट्रांसजेंडर प्रिंसिपल हैं, जो मार्च, 2015 में बनीं थीं। उन्होंने अपनी आत्मकथा 'पुरुष तन में फंसा मेरा नारी मन' में लिखा है कि कैसे उन्हें कॉलेज में दीवार से सटा कर जबरी दो पुरुषों द्वारा बदन को चेक किया गया कि यह स्त्री है या पुरुष या किन्नर किसी कॉलेज में किसी शिक्षिका के साथ इस तरह का व्यवहार हो और शिक्षक समाज तथा कॉलेज प्रशासन मूकदर्शक बना रहे, इससे शर्म की बात और क्या हो सकती है। मानोबी ने भी अपना लिंग परिवर्तन ऑपरेशन कराया है।

ट्रांसजेंडर का शोषक उनके आसपास ही मिल जाते हैं। अधिकांश ट्रांसजेंडर की आत्मकथा व आत्मकथन से पता चलता है कि उनका यौवन शोषण पहले उनके लोगों ने ही किया है और वो भी बचपन में। मानोबी वंद्योपाध्याय लिखती हैं कि उनका इक्कीस वर्षीय कजिन ही उन्हें खाली कमरे के एकांत में ले जाकर उनका शारीरिक शोषण किया तब वो मात्र पांचवीं कक्षा में पढ़ती थीं और ऐसा नहीं कि एक बार ही किया, बल्कि वह उस आदमखोर बाघ की तरह निकला, जिसके मुंह एक बार खून लग गया तो बार-बार मौके तलाश में रहता है और मौका मिलते ही दबोच लेता है। डॉ. पवन यादव का रेप भी मात्र चौदह वर्ष की आयु में हुआ। भारतीय कानून शायद उसे रेप की श्रेणी में रखता भी नहीं है, यह और बड़ी विडम्बना है। लक्ष्मीनारायण त्रिपाठी अपनी आत्मकथा 'मैं हिजड़ा मैं लक्ष्मी!' में लिखते हैं कि, 'जब मैं साथ साल का था, तब पहली बार मेरा यौन शोषण हुआ।' कोई और नहीं बल्कि रिश्तेदार का लड़का ने शोषण किया। एक-दो नहीं बल्कि अधिकांश ट्रांसजेंडर के साथ ऐसी घटनाएं घटती हैं।

लक्ष्मीनारायण त्रिपाठी उस शख्सियत का नाम है जिसके प्रयास से 15 अप्रैल, 2014 को सर्वोच्च न्यायालय ने ट्रांसजेंडर को तृतीय लिंग की मान्यता दी। मुख्यधारा में लाने के लिए न्यायालय द्वारा सरकार को इन्हें OBC में शामिल करने का निर्देश दिया गया। साथ ही कोर्ट द्वारा केंद्र और राज्य की सरकारों को यह भी निर्देशित दिया गया कि सरकारी नौकरियों में इन्हें आरक्षण दिया जाए तथा समस्त शैक्षिक संस्थानों में इनके लिए अलग से शौचालय बनवाया जाए। उभयलिंगी व्यक्ति (अधिकारों का संरक्षण) अधिनियम, 2019 कोर्ट के इसी निर्णय का

परिणाम है, जिसे 5 दिसम्बर, 2019 को राष्ट्रपति द्वारा मान्यता मिली और 25 सितम्बर, 2020 को भारत सरकार के न्याय और अधिकारिता मंत्रालय द्वारा अधिसूचित किया गया। तृतीय लिंग की मान्यता मिलने से पहले ट्रांसजेंडर को कई प्रकार की समस्याओं का सामना करना पड़ता था। कई ट्रांसजेंडर खुद को महिला मानती थीं लेकिन जब महिला के लिए आरक्षित पद पर उनकी नियुक्ति होती थी या चुनाव जीतती थीं तो उन्हें कोर्ट में महिला न होने का आरोप लगाकर हटा दिया जाता था। ट्रांसजेंडर 'कमला जान' 2000 ई. में मध्यप्रदेश के कटनी शहर की महापौर बनीं, लेकिन यह पद महिलाओं के लिए आरक्षित था इसलिए उनके ट्रांसजेंडर होने की वजह से न्यायालय ने उनकी जीत को अवैध ठहरा दिया। लगभग उसी समय उत्तर प्रदेश में 'आशा देवी' भी गोरखपुर की महापौर बनीं लेकिन वहां भी महिला के लिए आरक्षित पद था, इसलिए विवाद उत्पन्न हुआ और उन्हें भी 'कमला जान' की तरह हटना पड़ा। इन घटनाओं ने ट्रांसजेंडर समुदाय को झकझोर दिया, फिर उन लोगों ने 'जीती जितायी पॉलिटिक्स 'नाम की एक संस्था' शबनम मौसी' के नेतृत्व में स्थापित की। विदित हो कि शबनम मौसी भारत की पहली विधायक रही हैं, जो मध्यप्रदेश विधानसभा चुनाव में अनूपपुर जिले के सुहागरपुर विधानसभा क्षेत्र से चुनकर विधानसभा में दस्तक दी थीं और पूरे पांच सालों (1998-2003) तक विधायक बनी रहीं। उनके ऊपर 2005 में 'शबनम मौसी' नाम से योगेश भारद्वाज के निर्देशन में फिक्शन फीचर फिल्म भी बनी, जिसमें शबनम मौसी का किरदार आशुतोष राणा ने निभाया। मालूम हो कि तमिलनाडु भारत का पहला राज्य है जहां ट्रांसजेंडर को मतदान का अधिकार 1994 में मिला, जबकि देश में चुनाव आयोग द्वारा 2009 में 'अन्य' विकल्प के साथ मतदाता बनाने का निर्णय लिया गया। तमिलनाडु में सुप्रीम कोर्ट के निर्णय से पहले ही ट्रांसजेंडर को 'थर्ड जेण्डर' के रूप में मान्यता दी गई और उनके नाम से राशनकार्ड भी बनाया गया। अधिवक्ता डॉ. पवन यादव की सरकार से मांग है कि पूरे देश में ट्रांसजेंडर को पहचान पत्र के साथ राशनकार्ड दिया जाए। पहचान पत्र के अभाव में ट्रांसजेंडर को अपनी पहचान स्पष्ट करने के लिए नंगा होना पड़ता है जो कि शर्मनाक है। बिहार में कुछ ट्रांसजेंडर को पहचान पत्र जारी किया गया है लेकिन उनकी संख्या अभी भी सम्भवतः दहाई अंक में ही है।

विश्व विख्यात लेखिका सीमोन द बोउवार ने 'द सेकेण्ड सेक्स' में साफ लिखा है कि, 'स्त्री पैदा नहीं होती, बल्कि उसे बना दिया जाता है।' बिल्कुल ऐसा ही ट्रांसजेंडर के साथ भी होता है। इसलिए सेक्स और जेण्डर दोनों को अलग-अलग करके देखने की बात की जा रही है क्योंकि सेक्स जैविक है जबकि जेण्डर मानव रचित। सेक्स प्रजनन व जैविक रूप से प्राप्त स्त्री-पुरूष को एक सेक्सुअल ऑर्गन मात्र है जबकि जेण्डर सामाजिक और सांस्कृतिक प्रक्रिया है। जेण्डर की आग में ट्रांसजेंडर आज भी झुलस रहे हैं। जब किसी के घर विवाह होता है या बच्चे का जन्म होता है तो उसके यहां किन्नर आते हैं। हम अपने गांव-गलियों में आते किन्नर को दूर से ही पहचान लेते हैं, आखिर कैसे? कहीं-न-कहीं समाज व संस्कृति द्वारा एक पहचान दे दी गई, जिसे देखते ही बच्चे-बूढ़े व स्त्री-पुरुष सभी एक अलग प्रकार की हंसी हंसते हैं। लक्ष्मी नारायण त्रिपाठी, मानोबी वंद्योपाध्याय सहित तमाम ट्रांसजेंडर की आत्मकथा पढ़ने व आत्म आख्यान सुनने पर पता चलता है कि उन्हें खुद पता नहीं होता है कि वे ट्रांसजेंडर हैं, लेकिन वे जैसे-जैसे बड़े होते जाते हैं और समाज का व्यवहार उनके साथ बदलने लगता है तो वो असहज होकर अपने घर-परिवार में अपनी पहचान को लेकर सवाल करने लगते हैं। एक तरफ लोग इनसे आशीर्वाद भी लेते हैं और दूसरी तरफ इनका उपहास भी उड़ाते हैं। अधिकांश ट्रांसजेंडर इस परिस्थिति को अपनी नियति मान लेते हैं, जैसे कि पहले दलित-आदिवासी एवं स्त्रियां अपने शोषण को भी नियति मानकर स्वीकार कर लेती थीं, लेकिन अब बहुत हद तक बदला है और बहुत कुछ अभी बदलना बाकी है। ट्रांसजेंडर/किन्नर सिर्फ गांव की गलियों तक ही सीमित नहीं हैं, बल्कि शहर, बाजार एवं ट्रेन आदि में भी देखने को मिलता है। जाति-प्रधान भारत में जन्मजात श्रेष्ठता-हीनता बोध से ग्रसित समाज जाति और लिंग के आधार पर सिर्फ भेदभाव ही नहीं करता बल्कि उसे गाली का रूप दे दिया जाता है। आज तमाम जातियों का नाम गाली बन गया है और 'हिजड़ा' शब्द भी गाली के रूप में ही अधिक प्रयोग किया जाता है जो कि बेहद दुःखद है।

अलग-अलग भाषाओं में अलग-अलग नाम से संबोधित किया जाता है। लक्ष्मीनारायण त्रिपाठी के अनुसार उर्दू और हिन्दी में 'हिजड़ा' शब्द है। इसके साथ ही उर्दू में 'ख्वाजासरा' भी कहा जाता है। प्राचीन संस्कृत-ग्रंथों में 'किन्नर' शब्द की संकल्पना है, इसी वजह से हिन्दी में भी 'किन्नर' कहा जाता है। मराठी में 'हिजड़ा' और 'छक्का' दोनों शब्द प्रचलित हैं। वर्तमान में देश के कई राज्यों में 'छक्का' शब्द का प्रयोग सुनने को मिल जाता है। गुजराती में उन्हें 'पावैया' तथा पंजाबी में 'खुस्रा' या 'जनखा' कहा जाता है। तेलगु में 'नपुंसकुडु', 'कोज्जा', 'मादा' कहा जाता है, तो तमिल में 'शिरुनान गाई', 'अली', 'अरवन्नी', 'अरावनी' एवं 'अरुवनी' आदि शब्दों का इस्तेमाल किया जाता है। 'ट्रांसजेंडर' शब्द का सार्वभौमिक प्रयोग हो रहा है।

बिहार में, बिहार सरकार की ट्रांसजेंडर के प्रति संवदेनशीलता व जरूरी पहल सराहनीय है, लेकिन ट्रांसजेंडर को मुख्यधारा में जोड़ने के लिए बहुत कुछ करना बाकी है, लेकिन उम्मीद है कि वह दिन दूर नहीं है जब उन्हें भी समाज सम्मान की दृष्टि से देखेगा और उनके साथ भी समता, समानता एवं बंधुत्व वाला व्यवहार करेगा। बिहार जैसे सामन्ती व पिछड़े राज्य में महिलाओं को मुख्यधारा में जोड़ना भी कम कठिन नहीं रहा होगा लेकिन, आज बहुत हद तक बिहार में महिला-सशक्तीकरण हुआ है और इसका श्रेय कहीं-न-कहीं मुख्यमंत्री नीतीश कुमार को भी जाता है क्योंकि उन्होंने महिला-सशक्तीकरण के लिए पंचायतीराज चुनाव तथा सरकारी सेवाओं में महिला-आरक्षण लागू कर बिहार को देश में अग्रणी राज्य बनाया है। महिलाएं सामंती दीवारों को लांघकर मुख्यधारा में शामिल हो रही हैं, यदि बिहार के उच्च शिक्षण संस्थानों को सुधारकर गुणवत्तापूर्ण शिक्षा मिलने लगे तो बहुत तेजी से बिहार में बदलाव दिखने लगेगा।

(लेखक जयप्रकाश विश्वविद्यालय, छपरा में हिन्दी के असिस्टेंट प्रोफेसर हैं और वर्तमान में राजद अतिपिछड़ा प्रकोष्ठ के प्रदेश प्रवक्ता भी हैं।)

■

प्रकाश चंद्रायन

भारत में समाजवाद के सौ साल

भारत में समाजवाद के वैचारिक प्रयोग के सौ साल हो चुके हैं। वाम, मध्य, दक्षिणपंथी आदि सभी संगठन अपने-अपने समाजवाद के सहारे जनमानस में पैठ बनाते रहे। लगभग आठ दशकों तक जनता में इस शब्द और व्याख्या का प्रभावी असर रहा और समाजवाद की अनेक छटाएं दिखतीं रहीं। वैज्ञानिक समाजवाद, लोकतांत्रिक समाजवाद, संवैधानिक समाजवाद, क्रांतिकारी समाजवाद, गांधीवादी समाजवाद, बहुजन समाजवाद आदि। इस वैचारिक शब्दावली की विविधता के मद्देनजर ब्रितानी समाज विज्ञानी सी.ई.एम.जोड ने कहा, समाजवाद एक ऐसी टोपी है, जिसे कोई भी अपने अनुसार पहन लेता है। 'भारतीय समाजवादी आंदोलनों में यह प्रक्रिया बखूबी दिखती है। बावजूद इसके, गत चार दशकों से दुनिया और देश में यह चिंतन और प्रयोग कमतर होता गया है, जबकि विश्व पूंजीवाद बेलगाम रौंद रहा है। इस ठहराव में अब यह वैचारिक और प्रायोगिक सफरनामा अपने फलाफल के अवलोकन की मांग करता है।

रूसी क्रांति का अवदान

ऐतिहासिक पृष्ठभूमि में देखें तो हासिल होता है कि वैचारिक प्रक्रिया के तहत समाजवाद को मार्क्सवाद ने प्रस्तुत किया। देशज संदर्भ में श्रमण, लोकायत और आजीवक परंपरा में भी देखा जाता है, लेकिन बीसवीं सदी में यह यूरोपीय चिंतन परंपरा में विकसित हुआ।1917 में रूसी बोल्शेविक क्रांति ने समाजवाद को केंद्रीय वैश्विक दर्शन और प्रयोग के तौर पर सशक्त तरीके से स्थापित किया। बोल्शेविकों की निर्णायक जीत पर अमेरिकी संवाददाता जॉन रीड ने अपनी बहुपठित और पठनीय किताब- 'दस दिन जब दुनिया हिल उठी' में लिखा, 'आज से दुनिया दो भागों में बंटती है, एक समाजवादी दुनिया और दूसरी पूंजीवादी दुनिया।' इस वैचारिक क्रांति की धमक पूरी मानवता ने सुनी। उसके बाद समाजवाद की समाज वैज्ञानिक और मनोवैज्ञानिक गतिशीलता को थामना नामुमकिन हो गया।

उस वक्त भारतीय उपमहाद्वीप पर ब्रितानी साम्राज्य का निरंकुश शासन था। उसने समाजवादी क्रांति के वेग को रोकने के लिए एक ओर भारत को विश्वयुद्ध में इस्तेमाल किया तो दूसरी ओर भारत रक्षा कानून का कठोरतम पालन किया। दंडात्मक कार्रवाई के बावजूद समाजवाद का प्रसार कहां रूकने वाला था। सर्वप्रथम इस विचार का प्रभाव विदेशों में सक्रिय भारतीयों पर पड़ा और वे सांगठनिक स्तर पर उभरने लगे।

उल्लेखनीय है कि यह प्रभाव अनेक रूपों में पड़ा। रूसी-चीनी वैज्ञानिक समाजवाद के अलावा यह ब्रितानी फेबियन सोशलिज्म और जर्मन राष्ट्रवादी समाजवाद के बतौर भी आया। जाहिर है कि चीनी समाजवाद को छोड़कर ये सभी यूरोपीय संदर्भ के थे। रूसी-चीनी समाजवाद सशस्त्र सर्वहारा वर्गसंघर्ष का प्रयोगकर्ता बना, लेकिन उनके विरोधी उन पर राज्य पूंजीवाद अपनाने और लोकतंत्र की अनदेखी का आरोप करते रहे। ब्रितानी फेबियन सोशलिज्म वैज्ञानिक समाजवाद और क्रांतिकारी परिवर्तन के विरुद्ध जनतांत्रिक समाजवाद और शांतिपूर्ण कल्याणकारी सुधारों का समर्थक बना। अमेरिका की न्यू डील नीति भी इसी सिद्धांत पर टिकी रही, लेकिन जर्मन राष्ट्रवादी समाजवाद नाजीवाद में अपघटित हुआ। भारत में रूसी-चीनी मॉडल का आदर्श कम्युनिस्ट दलों ने लिया। ब्रितानी-अमेरीकी मॉडल का अघोषित असर जवाहरलाल नेहरू में दिखा, लेकिन उन पर रूसी आकर्षण भी बताया गया। कम्युनिस्ट उन्हें फेबियन सोशलिस्ट ही मानते रहे। दुर्योगवश जर्मन मॉडल ने सुभाषचन्द्र बोस को प्रेरित किया।

भारत में वाम समाजवाद

भारतीय संदर्भ में यह ऐतिहासिक विकास क्रम सोवियत संघ के ही एक हिस्से ताशकंद (अब उज्बेकिस्तान की राजधानी) में शुरू हुआ, जब 17 अक्तूबर 1920 को कम्युनिस्ट पार्टी ऑफ इंडिया की स्थापना हुई। इस पार्टी के संस्थापकों में वैज्ञानिक समाजवाद से प्रेरित और लेनिन के सहयोगी मानवेंद्र नाथ राय थे। उनके छह सहयोगियों में उनकी पत्नी ईवलिना ट्रेंट राय, अबनी मुखर्जी और उनकी पत्नी रोजा फिंटीगोव, मोहम्मद अली अहमद हसन, मोहम्मद शफीक सिद्दीकी और एम.पी.बी.टी.आचार्य थे। एम.एन.राय ने मैक्सिको की कम्युनिस्ट पार्टी भी बनाई। अपने पहले प्रयोग से हटकर राय ने 1930 में रेडिकल डेमोक्रेटिक पार्टी भी बनाई, जो औद्योगिक क्षेत्रों में सक्रिय थी। 1939 में एन दत्त मजुमदार ने भारतीय बोल्शेविक दल भी बनाया था। कुछ स्रोतों के अनुसार 1941 में अमेरिकी साम्यवाद से प्रभावित बोल्शेविक लेनिनिस्ट पार्टी भी बनी थी। अमेरिकी कम्युनिस्ट जे.लवस्टोन से जयप्रकाश नारायण भी प्रभावित थे। भारत में देशी तरीके से सत्यभक्त ने हसरत मोहानी के साथ 1 सितंबर 1924 को भारतीय साम्यवादी दल की पहल की, लेकिन आधिकारिक तौर पर 26 दिसंबर 1925 को कानपुर में भारत की कम्युनिस्ट पार्टी (कम्युनिस्ट पार्टी ऑफ इंडिया/सी.पी.आई) की स्थापना हुई यानी कम्युनिस्ट इंटरनेशनल से संबद्ध। भाकपा नाम से प्रसिद्ध इस दल ने कालक्रम में वैज्ञानिक समाजवाद के लिए सशस्त्र क्रांतिकारी और संसदीय दोनों प्रयोग किये। तेलंगाना की सशस्त्र क्रांति में सैन्य दमन के

बाद पार्टी ने संसदीय रास्ते से एकता और संघर्ष के साथ शांतिपूर्ण संक्रमण का प्रयोग आरंभ किया, जो आज तक जारी है। ऐतिहासिक तौर पर केरल में संसदीय रास्ते से पहली बार निर्वाचित कम्युनिस्ट सरकार बनी, जिसे नेहरू सरकार ने भंग कर दिया।

इस बीच सोवियत संघ की घेराबंदी का पश्चिमी देशों का अभियान जारी रहा। सैन्य संगठन नाटो सक्रिय रहा। शीतयुद्ध अबाध रहा। घेराबंदी से निपटने के लिए सोवियत संघ ने हंगरी और चेकोस्लोवाकिया में सैन्य कार्रवाई की। क्यूबा, वियतनाम,चीन को विरादराना मदद जारी रखा। अफ्रीकी देशों के मुक्ति आंदोलनों का सक्रिय सहयोग किया, लेकिन पोलेंड के चर्च और लेक वालेसा के सालिडरिटी अभियान ने उसे कमजोर करना जारी रखा। अंततः घेराबंदी कारगर हुई। सोवियत रूस का विघटन और पूर्वी यूरोपीय (वारसा)देशों में सत्ता परिवर्तन हुआ। पूंजीवादी दुनिया को चरम सफलता तब मिली, जब एक ओर युगोस्लाविया का नामोनिशान मिटाया जा रहा था और दूसरी ओर जर्मनी का एकीकरण हो रहा था। इन सभी देशों से भाकपा का विरादराना सम्बन्ध था, इसीलिए भारतीय वाम पर इन घटनाओं का व्यापक असर पड़ा। इस दौरान पार्टी ने संविद,वाम मोर्चा, गैर कांग्रेस और गैर भाजपा मोर्चा का भी प्रयोग किया है, बावजूद इसके सैद्धांतिक तौर पर इनका समाजवाद, लोकतंत्र, धर्मनिरपेक्षता, और वर्ग संघर्ष में विश्वास अटूट है।1964 में चीनी साम्यवाद की ओर झुकाव के कारण भारत की कम्युनिस्ट पार्टी (मार्क्सवादी) बनी, जिसे माकपा कहा गया। हालांकि, चीन में पूंजी केंद्रित राज्यवादी साम्यवाद के प्रयोग की चर्चा है। माकपा ने वाम जनवादी क्रांति पर जोर दिया और तीन राज्यों में सत्ता संभाली। इन दोनों दलों में सैद्धांतिक मतांतर के बावजूद समाजवाद के लिए कार्यकारी एकता है। भारतीय राजनीति में समाजवाद के प्रयोगधर्मा के तौर पर सबसे उल्लेखनीय नाम क्रांतिकारियों की 1928 में स्थापित 'हिंदुस्तान सोशलिस्ट रिपब्लिकन आर्मी' का है, जिसने सशस्त्र क्रांति का रास्ता चुना। 1923 से हिंदुस्तान रिपब्लिकन एसोसिएशन के नाम से सक्रिय क्रांतिकारियों ने सोशलिस्ट और आर्मी शब्द जोड़कर हिंसोरिआ (एचएसआरए) में नामांतरित किया। यह अराजकतावाद से समाजवाद की ओर प्रस्थान था। इस विरासत की दावेदारी के तहत भारत की कम्युनिस्ट पार्टी (मार्क्सवादी-लेनिनवादी)भी बनी, जिसे बीजिंग रेडियो ने वसंत का वज्रनाद कहा। इस धारा में कुछ सशस्त्र क्रांति तो कुछ संसदवादी रास्ते से समाजवादी व्यवस्था के लिए कई दशकों से सक्रिय हैं। भारतीय बोल्शेविक पार्टी, फारवर्ड ब्लाक, क्रांतिकारी समाजवाद पार्टी, सोशलिस्ट युनिटी सेंटर आफ इंडिया, लाल निशान पार्टी आदि अनेक दल समाजवादी लक्ष्य के लिए बने। प्रयोग जारी है लेकिन प्रभाव क्षेत्र सिकुड़ा है। नवाचार की तलाश भी जारी है। इन संगठनों के अवदान को नकारा नहीं जा सकता। 1920 से 2022 तक वाम संगठनों के समाजवादी आंदोलनों की छानबीन से स्पष्ट होता है कि मंज़िल अभी नहीं मिली है। उत्पादक वर्ग के हितों को प्रमुखता दी गई है। नवपूंजीवाद, साम्राज्यवाद और धार्मिक आतंकवाद ने समाजवाद को पीछे धकेला है। माकपा 1920 को जबकि भाकपा 1925 को भारत में कम्युनिस्ट पार्टी की शुरूआत मानती है। इस मान्यता से 2025 में शताब्दी वर्ष आएगा। इतनी लंबी अवधि में भी वाम एकता की कोशिश नहीं हुई, जबकि ये विपक्षी एकता के लिए हमेशा तत्पर हैं।

लोकतांत्रिक समाजवाद

दूसरी धारा लोकतांत्रिक समाजवाद के बतौर आई। इस धारा के सिद्धांतकारों ने मार्क्सवाद से ही वैज्ञानिक समाजवाद का पाठ सीखा, लेकिन क्रियात्मक रास्ता गांधीवाद का लिया। वैज्ञानिक समाजवादियों का मत था कि मार्क्सवाद वर्ग संघर्ष और गांधीवाद वर्ग सहयोग पर आधारित है, इसलिए दोनों में मूल अंतर्विरोध हैं। बावजूद इसके लोकतांत्रिक समाजवादियों ने अहिंसक प्रतिरोध, सिविलनाफरमानी और संसदीय भागीदारी का रुख किया। पहले यह धारा कांग्रेस के भीतर फूटी और 1934 में कांग्रेस सोशलिस्ट पार्टी के रूप में सक्रिय हुई। इसके पूर्व 1931 में बिहार और 1933 में पंजाब में सोशलिस्ट पार्टी बन चुकी थी, लेकिन राष्ट्रीय स्तर पर कांसोपा ने पुरजोर दस्तक दी। कांसोपा का नेतृत्व बहुचर्चित बौद्धिक नेताओं का महासंगम था, जिनमें नरेंद्रदेव, जयप्रकाश नारायण, राममनोहर लोहिया, कमलादेवी चट्टोपाध्याय, अच्युत पटवर्धन, मीनू मसानी, युसूफ मेहरअली, अशोक मेहता आदि का समावेश था। इनमें अधिकांश मार्क्सवादी थे, विशेष तौर से नरेंद्रदेव, जयप्रकाश नारायण और राममनोहर लोहिया। नरेंद्रदेव ने 'सोशलिस्ट पार्टी और मार्क्सवाद', लोहिया ने मार्क्स, गांधी और समाजवाद और जयप्रकाश नारायण ने 'समाजवाद क्यों?' नामक पुस्तकें लिखीं थीं। जेपी ने अपनी किताब के एक अध्याय में गांधी को पूंजीवाद का दलाल लिखा था और स्पष्ट किया था कि समाजवाद का एक ही रूप एक ही सिद्धांत है और वह है मार्क्सवाद। यही किताब पढ़कर ई.एम.एस.नंबूदरीपाद मार्क्सवादी हुए और कांसोपा में आये थे। 1936 में कम्युनिस्ट भी कांसोपा में शामिल हुए थे, लेकिन 1939 में यह कहते हुए अलग हो गए कि सोशलिस्ट पार्टी नौजवानों को कम्युनिस्ट होने से रोकने के लिए बनी है। 1942 में तो समाजवादी भारत छोड़ो आंदोलन के अगुआ हो गए और कम्युनिस्ट विरोधी। कांसोपा राष्ट्रीय आंदोलन में शामिल रहकर सक्रिय रही, लेकिन 1948 में सरदार पटेल द्वारा दोहरी सदस्यता अमान्य करने के बाद कांसोपा ने कांग्रेस शब्द हटाकर सोशलिस्ट पार्टी नाम लिया। जेबी कृपलानी की 'किसान मजदूर प्रजा पार्टी' के विलय के बाद इसका नाम 'प्रजा सोशलिस्ट पार्टी' हुआ। 1952के आम चुनाव में पराजय के बाद नेतृत्व में निराशा के कारण अनेक नेता निष्क्रिय होने लगे, हांलांकि 1954 में केरल में प्रसपा के पत्तम थानु पिल्लै के मुख्यमंत्रित्व में कांग्रेस समर्थित सरकार बनी, लेकिन त्रावनकोर में गोलीबारी के विरुद्ध नैतिक तौर पर इस्तीफा मांगने के मुद्दे पर राममनोहर लोहिया पार्टी से अलग हो गए। उनका कहना था कि लोकतंत्र में जनता पर गोली चलाना अनैतिक है।

इस अंतर्संघर्ष के कारण सांस्कृतिक मार्क्सवादी माने जाने वाले नरेंद्रदेव बुद्ध,मार्क्स और गांधी का समन्वय करते हुए अकादमिक क्षेत्र में चले गए। जयप्रकाश भूदान-सर्वोदय के शरणागत हुए। साम्यवादियों की आलोचना थी कि ओहायो विश्वविद्यालय में पढ़े जेपी पर अमेरिकी समाजवाद और जर्मनी में शिक्षित लोहिया पर जर्मन समाजवाद का असर था, जबकि इस तर्क से तो बंगाल के अनेक अभिजन कम्युनिस्टों पर ब्रितानी समाजवाद का असर रहा होगा क्योंकि वे लंदन में पढ़ते थे। सोशलिस्ट भी भाकपा को रूसी बगलबच्चा कहते रहे। लोहिया समाजवादी संघर्ष में प्रयोगशील रहे और गांधीवाद के साथ देशज समाजवाद को विकसित किया। वे खुद को सरकारी, मठी नहीं कुजात गांधीवादी कहते थे। जाति, लिंग, वर्ग, वर्ण, भाषा, शस्त्र भेदों से रहित समाज की अवधारणा रखी। सप्तक्रांति, जेल-फावड़ा-वोट,सिविल नाफरमानी, राजकीय-आर्थिक-दिमागी समानता, भारत-पाक-महासंघ, विश्व पंचायत, चौखंबाराज आदि की कार्यनीति देश के समक्ष रखी। समता संगठन और लोहिया विचार मंच के एक समारोह में जेपी ने कहा कि लोहिया की सप्तक्रांति ही संपूर्ण क्रांति है क्योंकि संपूर्ण क्रांति अस्पष्ट थी। लोहिया ने संसोपा सहित अनेक जुझारू अनुषंगी संगठन बनाये। उनका सोशलिस्ट इंटरनेशनल से भी जुड़ाव था। उन्होंने अंग्रेजीपरस्त संसद की भाषा हिन्दी में बहस कर बदल दी। यह उनका देसीपन था, लेकिन दूसरा प्रयोग विवादास्पद रहा। उन्होंने कांग्रेसी

एकाधिकार खत्म करने के लिए गैर कांग्रेसवाद, साझा न्यूनतम कार्यक्रम और संविद सरकार का सूत्र रखा। इसके तहत दक्षिणपंथी जनसंघ और वामपंथी दलों के साथ सरकारें बनीं, लेकिन हितों के टकराव के कारण प्रयोग विफल हुआ। इसी दौरान लोहिया का निधन हुआ और आगे की लोकतांत्रिक समाजवादी राजनीति कभी एक कदम आगे कभी दो कदम पीछे होने लगी। लोहियाविहीन संगठन व्यक्तिवाद में फंसता गया।

कांग्रेस और भाजपा का समाजवाद

आम चुनाव में हार के बाद लोकतांत्रिक समाजवादियों में निराशा और बिखराव के बावजूद जनमानस में आकर्षण देख कर 1957 के आवाड़ी अधिवेशन में कांग्रेस ने समाजवादी ढंग का समाज का संकल्प लिया, जबकि प्रधानमंत्री नेहरू ने अमेरिकी योजना व्यवस्थापक डॉ सोलोमन ट्रोन की न्यू डील और मिश्रित अर्थव्यवस्था को लागू किया था। अमेरिकी मॉडल न्यूडील के तहत पंचवर्षीय योजना, बड़े बांध और सामुदायिक विकास को आधार बनाया गया। राजकीय समाजवाद कांग्रेस का लोकलुभावन कदम था। इसे आगे बढ़ाते हुए 1964 के भुवनेश्वर अधिवेशन में लोकतंत्रात्मक समाजवाद को दुहराया गया। 1967 में लोहिया की गैर कांग्रेसवादी गोलबंदी के कारण कांग्रेस नौ राज्यों में हार गई। इसके बाद 1969 में इंदिरा गांधी ने अंदरूनी सत्ता संघर्ष से निबटने के लिए बैंकों के राष्ट्रीयकरण और प्रिवी पर्स समाप्ति को समाजवादी कदम के तौर पर पेश किया। आगे 1975 के सत्ता संकट से उबरने के लिए लागू आपातकाल में स्थगित संवैधानिक अधिकारों के बीच संविधान की उद्देशिका में समाजवादी शब्द जोड़ा गया। यह जनता में समाजवाद की चाहत के दोहन की पहल थी। बाद में रास्ता बदलते हुए 1991 में नई अर्थनीति के तहत वैश्विक अर्थव्यवस्था का पुर्जा बनने के उपरांत कितना समाजवाद धरातल पर बच गया है! इस तरह मध्यमार्गी कांग्रेस ने गांधीवाद से मिश्रित अर्थव्यवस्था, सरकारी समाजवाद, गरीबी हटाओ, बीस सूत्री कार्यक्रम, नई अर्थनीति, विश्वपूंजीवाद तक का सफर कर लिया है और गांधी के अंतिम जन को मनरेगा समाजवाद की अनोखी भेंट दी है। जाहिर है कि समाजवाद कांग्रेस की मूल अवधारणा में नहीं था। जनाकांक्षा के तहत उसने यह आवरण लिया था।

इसी तरह की मुद्रा दक्षिणपंथी भारतीय जनता पार्टी ने 6 अप्रैल 1980 में ली थी। इसके पूर्व गैर कांग्रेसवाद के तहत 1967 में संविद सरकारों में शामिल होकर और संपूर्ण क्रांति की लहर पर सवार होकर जनसंघ ने मुख्यधारा में अपना विस्तार किया। 1977 में जनसंघ का विलय जनता पार्टी में हुआ, लेकिन इस प्रयोग की विफलता के बाद वह भाजपा के रूप में अवतरित हुई और गांधीवादी समाजवाद को लक्ष्य घोषित किया, जिसका आधार 'हिन्द स्वराज' को बताया गया। पांच सूत्री कार्यक्रम लिये गए- 1.राष्ट्रवाद और राष्ट्रीय एकात्मकता, 2.लोकतंत्र, 3.सामाजिक-आर्थिक विषयों पर गांधीवादी दृष्टिकोण 4.सकारात्मक पंथनिरपेक्षता एवं सर्वपंथ समभाव और 5.मूल्य आधारित राजनीति।

इसे दीनदयाल उपाध्याय के एकात्म मानववाद का सार बताया गया। इसके बाद अनेक राज्यों में कई बार और केंद्र में चार बार भाजपा की सरकारें बनीं, जो कठोर प्रशासनिक केंद्रीकरण, निरंतर सामाजिक-धार्मिक ध्रुवीकरण, अंधाधुंध आर्थिक-औद्योगिक एकाधिकारीकरण, सनातनी संस्कृतिकरण और दरिद्रीकरण को बढ़ाती रही। 2014 के बाद गांधीवादी समाजवाद का स्मृतिलोप किया गया और गांधी नफरत के निशाने पर लाये गए। विचार नवनीत के शस्त्रागार से सारे हथियार निकाले गए और गांधीवादी समाजवाद के मुखौटे फेंक कर एकलवादी चेहरा उजागर किया गया, जो भयावह है। कौन यकीन करेगा कि भाजपा का गांधी, गांधीवाद और गांधीवाद समाजवाद में विश्वास है? सबसे बड़ा संहार धरातल पर हुआ है कि कांग्रेस के श्रमजीवी मनरेगा को भाजपा के राशनजीवी लाभार्थी में अपघटित कर दिया गया है। भारत का भूख सूचकांक गिरता जा रहा है और अमीरों की अमीरी उच्च सूचकांक छू रही है। यही दो सरकारी समाजवादों का फलाफल है। आमजन का ऐसा हाशियाकरण अभूतपूर्व है।

हाशिया का समाजवाद

समाजवाद के विभिन्न प्रयोगों का दावा वृहत्तर हाशिया का सशक्तीकरण था, लेकिन हाशिया समाज के एक अग्रणी नायक और रिपब्लिकन पार्टी ऑफ इंडिया के संस्थापक डॉ. भीमराव आम्बेडकर का मानना था कि लोकतंत्र में समता आधारित राज्य समाजवाद ही विकल्प है, जिसमें उत्पादन के सारे स्रोतों पर राज्य का नियंत्रण हो। यह तभी संभव है जब राज्य पर उत्पादक शक्तियों का अधिकार हो, यही सैद्धांतिक आधार तो वैज्ञानिक समाजवादियों का भी है। दूसरी व्याख्या द्रविड़ आंदोलन के अगुआ ई.वी.रामास्वामी नायकर की है। वे मानते थे कि अर्थव्यवस्था और श्रमव्यवस्था पूरी तरह धर्म और जाति की अपरिवर्तनीय संरचना पर टिकी है, इसलिए इन्हें नष्ट किये बिना समाजवाद असंभव है।

वैज्ञानिक और लोकतांत्रिक समाजवादियों का अंतिम लक्ष्य मिहनतकश जनता का उत्पादन के स्रोतों पर अधिकार रहा, लेकिन वे सिर्फ संसदवाद में रम गए और संघर्ष कम हो गया। बावजूद वैज्ञानिक समाजवादियों ने अपनी पहचान नहीं छोड़ी, लेकिन लोकतांत्रिक समाजवादियों ने पहचान छोड़ दिया। छठे दशक तक दोनों के लाल झंडे पर उत्पादक वर्ग के प्रतीक चिह्न होते थे। नारे लगते थे-धन और धरती बंट के रहेगी/जब तक भूखा इंसान रहेगा, धरती पर तूफान रहेगा/बोल मजूरो हल्ला बोल, बोल किसानो हल्ला बोल/जमीन किसकी,जो जोते उसकी/लाल किले पर लाल निशान, मांग रहा है हिंदुस्तान आदि। बाद के दशकों में ये नारे धीमे पड़ने लगे। वाम दलों ने झंडे और चिह्न तो नहीं छोड़े, लेकिन सोशलिस्ट दलों ने झंडे-चिह्न तो बदले ही, सिद्धांतों को भी छोड़ सिर्फ सत्ता समीकरण साधने लगे। दलीय पहचान का भी विलोप किया। अखिल भारतीय दल को लोहिया के वंशधरों ने तार -तार कर दिया। दल के मजदूर, किसान, युवा, महिला, बुद्धिजीवी, कर्मचारी सहित अन्य संगठनों को निष्क्रिय किया गया। लोहिया पीछे हो गए और मंडल का पूरा नहीं सिर्फ एक सूत्र आगे, जबकि विशेष अवसर का सिद्धांत लोहिया ने दिया था। मंडल की अन्य सिफारिशों को लागू करने का कोई राजनीतिक प्रयास समाजवादियों ने नहीं किया। गैर बराबरियों से लड़ाई ठहरती गई और पूंजीवादी विश्व व्यवस्था पर खामोशी छा गई। सोपा-प्रसोपा-संसोपा-भाक्रांद-भालोद-जनता पार्टी-दमकिपा-जनता दल-जदयू-राजद-लोजपा आदि नामांतरणों से गुजरती हुई सत्ता में भागीदारी तक सिमट गई। लोहिया और चरण सिंह को देशज कहा गया, लेकिन उनकी धारा रुक गई। सप्तक्रांति आर्थिक-सामाजिक-सांस्कृतिक परिवर्तनों से कोई सरोकार नहीं है, इसलिए इनके जनाधारों को कहीं दक्षिणपंथी तो कहीं मध्यपंथी हथिया रहे हैं। जिसकी जितनी संख्या भारी, उसकी उतनी हिस्सेदारी कहने वाली बहुजन समाज पार्टी मिहनतकश बहुजनों को आर्थिक आधार नहीं दे सकी। विशेष अवसर के सिद्धांत के तहत आदिवासी,दलित और पिछड़ा वर्ग को शिक्षा और सेवा में आरक्षण तो दिया गया, लेकिन जब सरकार ही अंतरराष्ट्रीय एजेंसियों और कॉरपोरेट के समक्ष निजीकरण के लिए झुक गई है, तब आरक्षण प्रभावहीन होना ही है। जरूरत उत्पादन के स्रोतों और आर्थिक संसाधनों पर वंचितों के अधिकार का है। इसलिए सक्षम विवेकसम्मत विकल्प ही वांछित है। प्रतिकूलताएं वैचारिक प्रवाह

में आती हैं, लेकिन कोई विचार समाप्त नहीं होते,अपना पुनराविष्कार कर लेते हैं।

अधिरचना पर प्रभाव

संक्षेप मे समाजवाद के विविध वैचारिक प्रयोगों ने चढ़ाव-उतार के बावजूद अधिरचना(सुपर स्ट्रक्चर) पर व्यापक रचनात्मक प्रभाव डाला। कला-साहित्य,संस्कृति-संगीत, नाटक-फिल्म को प्रभावित किया। लोकतांत्रिक समाजवादियों के नवसांस्कृतिक संघ, परिमल और संगमनी आदि की सक्रियता रही। वाम समाजवादियों के प्रगतिशील लेखक संघ, जनवादी लेखक संघ, जन नाट्य संघ ने विविध रचनात्मक विधाओं को समृद्ध किया। अनेक रचनाकार राष्ट्रीय फलक पर मानक बने और पाठकों-दर्शकों को आधुनिक विचारबोध और नया भावबोध दिया। नाटकों-फिल्मों में नवाचार आया। अपनी-अपनी वैचारिक धुरियों पर रचनाशीलताएं गतिमान रहीं। नवजनवादी सांस्कृतिक मोर्चा, जनसंस्कृति मंच आदि अनेक छोटे-छोटे संगठनों ने भी स्तरीय योगदान किया। वैचारिक शिविर बने और शीतयुद्ध भी हुए। कतिपय अवसरवाद और कैरियरवाद भी आता रहा। शीतयुद्ध के क्रम में वाम बुद्धिजीवियों ने टिप्पणी की कि लोहिया के मरने के बाद लोहिया की बौद्धिक विधवाएं दर-दर भटक रहीं हैं, लेकिन उस भटकाव में भी श्रीकांत वर्मा ने 'मगध' जैसी काव्यकृति दी, जो सत्ता और व्यवस्था की नियति का एक्सरे है। यह सच है कि लोहिया के राजनीतिक वंशधरों को शायद ही किशन पटनायक, सच्चिदानन्द सिन्हा, केशवराव जाधव, मस्तराम कपूर, सुब्बन्ना और ओमप्रकाश दीपक जैसे चिंतकों के नाम याद हों, जिन्होंने उस वैचारिकी को आगे बढ़ाया। बहुजन समाजवादियों को भी बौद्धिक संगठनों बामसेफ और दलित पैंथर के सरोकारों से शायद ही कोई बास्ता हो, लेकिन चिंतक रावसाहब कस्बे, कांचा आइलैया आदि का योगदान अन्यतम है। एक दिलचस्प तथ्य यह भी है कि कांग्रेस और भाजपा को छोड़कर लगभग अन्य सभी बुद्धिजीवियों ने मंडलनीत आरक्षण का समर्थन किया, लेकिन रचना में मार्क्सवादी-लेनिनवादी वरवरा राव ने ही उसपर उल्लेखनीय लंबी कविता लिखी। अरुंधती राय और आनंद तेलतुंबडे ने भी विमर्श को प्रखर कर लोक बुद्धिजीवी की पक्षधरता में योगदान किया। वाम बौद्धिक संगठन अपने-अपने दलीय दायरे में तो सक्रिय रहे हीं, साझा तौर पर भी पहलकदमी करते रहे हैं। वामेतर बौद्धिक संगठनों की धारणा है कि वाम बौद्धिक संगठनों के दायरे तंग हैं। वाम रचनाकारों पर उत्पादक वर्ग से अलग पश्चिमी विमर्शऔर शहरी मध्यवर्गीय विषय वस्तुओं का प्रभाव भी खूब पड़ा। इसके बावजूद साहित्य, फिल्म, संस्कृति और कलाओं का कोई क्षेत्र नहीं है, जहां वाम गतिविधियों ने गहरी छाप न छोड़ी हो। फेहरिस्त के लिए विस्तार चाहिए। अंतिम जन को लक्षित कर गांधीवादी बुद्धिजीवी भी अपनी धुरी और परिधि में सदा चिंतनरत रहे हैं। नेहरूवियन बौद्धिक भी मोचार्बंद रहे हैं। वैचारिक पत्रकारिता में यह रचनात्मक संघर्ष चलता रहा है। ये सभी अब सोशल मीडिया में भी उपस्थित हैं। ये अवदान स्मरणीय हैं। देश को सौवें वर्ष में भी समाजवाद का इंतजार है।

(लेखक लोकमत समाचार, नागपुर के मशहूर फीचर पत्रकार रहे हैं। संप्रति हिन्दी के विविध विषयों पर लेखन।)

■

नाइश हसन

उर्दू पत्रकारिता : दो सौ सालों का सफर और उसकी चुनौतियां

भारत में पत्रकारिता का इतिहास बहुत पुराना है और आज के दौर में तो पत्रकारिता का दायरा सोशल मीडिया ने और ही बढ़ा दिया है जिसके जरिये आम अवाम आज अपने सवालों को उठाने में कामयाब है। खबरों की पहुंच भी उस तक आसानी से है। जहां तक उर्दू पत्रकारिता का ताल्लुक है उसका एक खास दर्जा रहा है। जंगे-आजादी में उर्दू पत्रकारों ने न सिर्फ कलम उठाई, बल्कि मुल्क के लिए अपनी जान भी कुरबान की। यह कहा जा सकता है कि उर्दू पत्रकारिता ने एक सुनहरा दौर देखा।

उर्दू का पहला अखबार वैसे सन 1794 में टीपू सुल्तान ने निकाला था जिसका नाम था 'फौजी'। यह अखबार मैसोर की सरकारी प्रेस से छपा, इसके बाद कलकत्ता से हरिहर दत्ता के सम्पादन में 27 मार्च 1822 को 'जाम-ए-जहांनुमा' वीकली सामने आया। उसके बाद मुंशी नवल किशोर ने 'सफीर-ए-आगरा' निकाला, और फिर दिल्ली से भी कई अखबार निकलने लगे। इस तरह देखा जाए तो उर्दू पत्रकारिता की तारीख दो सौ बरसों से भी ज्यादा पुरानी है। इन सालों में उर्दू पत्रकारिता ने कई दौर देखे।

काबिले गौर बात यह है कि उस जमाने में उर्दू अखबार छापने का सबब यह बिल्कुल नहीं था कि लोगों को उर्दू से इश्क था, बल्कि वही आम बोलचाल की जबान थी। वही रस्मुल खत था। देवनागरी के बजाय उर्दू में पत्रकारिता आम थी। उसकी लिपि फारसी और जबान हिंदवी। वह जबान जो हिंदुस्तान में पैदा हुई और पली-बढ़ी। 1857 की क्रान्ति में उर्दू अखबारों ने ऐसा किरदार निभाया कि उसे भुलाया नहीं जा सकता। आम-अवाम में जंग-ए-आजादी का जुनून पैदा करने में उर्दू पत्रकारिता पेश-पेश थी। मौलाना मोहम्मद बाकर जो देहली उर्दू अखबार के पत्रकार थे और जंग-ए-आजादी में उनके अखबार ने बड़ा किरदार अदा किया। यह बात अंग्रेजों को नाकाबिल-ए-बर्दाश्त लगी, लिहाजा इसी का नतीजा था कि मौलवी मोहम्मद बाकर को गोलियों से छलनी करवा दिया गया। मौलवी मोहम्मद बाकर को उर्दू पत्रकारिता का पहला शहीद माना जाता है। इसी तरह पयाम-ए-आजादी के एडिटर मिर्जा बेदार बख़्त को भी फांसी पर चढ़ा दिया गया था। इलाहाबाद से छपने वाला अखबार 'स्वराज' के एक के बाद एक नौ एडिटर जेल भेज दिए गए, लेकिन उन्होंने हक की बात लिखने से कभी गुरेज नहीं किया। वह पत्रकार हमेशा अपनी जान हथेली पर लेकर चलते थे, उन्हें मालूम था कि हुकूमत उनके साथ कुछ भी सुलूक कर सकती है। अंग्रेजों ने पत्रकारों को काला पानी की सजा भी सुनाई। ऐसे अखबारों में अलजमीयत, दावत, रोजनामा, कोहिनूर, सादिकुल अखबार, पयामे आजादी, सेहर सामरी का नाम लिया जाना जरूरी हो जाता है।

ऐसे शानदार वक़्त से गुजरते हुए जहां उर्दू पत्रकारिता ने अपने उरूज को देखा वहीं जवाल भी देखना पड़ा। अंग्रेजों ने अपनी शिकस्त देख उर्दू सहाफत को हाशिए पर लाने की तजवीज ईजाद कर ही ली थी, इस नतीजे में फोर्ट विलियम कॉलेज से मजहब की बुनियाद पर हिंदी के पक्ष में आंदोलन चलाया गया। दक्षिणपंथी ताकतों को तैयार किया

गया, जिन्हें बाकायदा यह समझाया गया कि उर्दू की लिपि फारसी है अर्थात यह हिंदुस्तान की जबान नहीं है। यह सिलसिला जो निकला तो फिर इसने कभी रुकने का नाम न लिया।

हिंदुस्तान की तक्सीम के दौरान भी यह स्थापित करने की कोशिशें जारी रहीं कि उर्दू मुसलमानों की जबान है और सरकार ने उर्दू पत्रकारिता की ओर से अपना हाथ धीरे-धीरे खींच लिया। वह वर्ग जो पत्रकारिता में कयादत करता था वह भी पाकिस्तान चला गया। लिहाजा उर्दू पत्रकारिता में गिरावट आने लगी। उर्दू की तरफ से रुझानात कम होने लगे।

इमरजेंसी के बाद के दौर में भी इंदिरा गांधी की हुकूमत ने पत्रकारों के लिए तमाम तरह की स्कीम बनाई। सीधे तौर पर उन्हें खरीदा नहीं जा सकता था लिहाजा अखबारों को इश्तेहार की सूरत में खरीदना शुरू किया। उसके बाद पत्रकारों को मकान, जमीन, गाड़ियों के पास और वेलफेयर के नाम पर तमाम कुछ दिया जाने लगा। इसका नतीजा यह रहा कि पत्रकारिता अपने मिशन से भटक गई, उसकी सेहत गिरना शुरू हो गई। उर्दू की सेहत ज्यादा तेजी से गिरी, क्योंकि उसकी पाठक संख्या भी कम हो चुकी थी। हिंदी का बोलबाला था, हूकूमत हिंदी पर पैसे खर्च कर रही थी। उर्दू को प्रमोशन नहीं मिल रहा था तो जो तेज तर्रार जेहन थे, वह भी वहां चले गए जहां उन्हें अच्छी रकम मिल रही थी। यहीं तक मामला संभल जाता तो बेहतर होता, लेकिन उर्दू पत्रकारिता में गिरावट थोड़ा और बढ़ी जब इस बिगड़े हालात में पत्रकारिता में मजहबी लोगों का दखल बढ़ गया, अखबार के नाम पर मजहब को प्रमोट किया जाने लगा। शायर, अदीब अखबारों में बड़ी पोजीशंस पर आने लगे। वह पत्रकारिता की रूह को बिल्कुल नहीं जानते थे, उन्होंने पत्रकारिता को फिक्शन बना डाला। अब अखबार में न तो नजरिया बचा न विश्लेषण।

यूं देखा जाए तो उर्दू पत्रकारिता एक लंबे वक़्त से तरह-तरह की चुनौतियों का सामना करती आ रही है। आज भी मुल्क में उर्दू के हजारों अखबार हैं, लेकिन उसके सामने जो एक बड़ी दुश्वारी है वह यह कि उसकी आर्थिक स्थिति काफी खराब है। साल में गिने चुने दिन ही इश्तेहार मिलते हैं, सरकारी इश्तेहारात तो लगभग न के बराबर रह गए हैं।

दूसरी बात यह भी है कि उर्दू के बारे में मौजूदा हुकूमत का रवैया तंगनजरी का है, इस पराएपन और बेजा नफरत ने भी जबान का काफी नुकसान किया। जिस जबान के बारे में हुकूमत का नजरिया ही नफरत भरा हो तो वह जबान फरोग कैसे पा सकती हैं, इतने बडे. सूबे उत्तर प्रदेश में एक भी उर्दू मीडियम स्कूल नहीं है, जब जबान सिमट जाएगी तो उसकी सहाफत का सिमटना भी लाजमी है।

जरूरत इस बात की है कि जबान को महज जबान की तरह देखा जाए, उसे मजहबी ऐतबार से न देखा जाए। उर्दू अपना पहले जैसा मकाम हासिल कर सकती है बशर्ते हुकूमत एक खुली जेहनियत से जबान को आगे बढ़ाने में साथ दे, लेकिन देखा तो यह जा रहा है कि जिस पैकेट पर उर्दू में कुछ छपा नजर आ जा रहा है उस प्रोडक्ट से नफरत की जा रही है, यह काम बिना सरकार की शय के हो पाना मुमकिन नहीं है। हिंदुस्तान में पैदा हुई पली-बढ़ी जबान से उसके अपने घर वाले ही नफरत पालने लगे, उसे परदेसी और मुसलमान की जबान कह कर हिकारत से देखने लगे। ऐसे मे उर्दू पत्रकारिता के हालात को सुधार पाना गंभीर चुनौती भरा काम है। सरकार के तमाम लीडर उर्दू भाषा के बारे में नफरत भरे बयान दे रहे हैं, इससे उर्दू को बढ़ावा देना काफी मुश्किल भरा रास्ता लग रहा है। ऐसे मुश्किल दौर में भाषा को बचाना और उसकी सहाफत को बचाना दोनों ही चुनौती है, क्योंकि हुकूमत अधिनायकवादी मानसिकता के खिलाफ जाकर अपनी सनक के हिसाब से हिंदुत्व की जो नई परिभाषा गढ़ चुकी है उसके दायरे में हर वह चीज काबिले ऐतराज है जिसका ताल्लुक मुसलमानों से है। जरा सोचिए आज हिंदुस्तानी से उर्दू को अलग कर दिया जाए तो हमारे पास बोलने को क्या बचेगा? उर्दू भारतीय संघ की 18 भाषाओं में से एक है लेकिन वह आज सरकार के निशाने पर है, एक तरफ लोग उर्दू पत्रकारिता के दो सौ सालों का जश्न मना रहे हैं तो दूसरी तरफ उसी भाषा से नफरत की खबरें रोज आ रही है। ऐसे में आने वाले वक़्त में उर्दू का मुस्तकबिल क्या होगा यह कह पाना काफी मुश्किल है।

(नाइश हसन स्वतंत्र पत्रकार हैं।)

स्रोत : न्यूज क्लिक

■

शहबाज हुसैन

मजहरुल हक : जंग-ए- आजादी के अनमोल हीरे

मौलाना मजहरुल हक भारत के चोटी के नेताओं में थे। उन्होंने उस समय अंग्रेजी साम्राज्य के विरुद्ध आजादी की लड़ाई शुरू की, जब बहुत कम लोग इस मैदान में आये थे। गांधीजी ने उनके बारे में ठीक ही कहा है, 'यों तो ऐसे लोग हर जमाने में बहुत कम हुए हैं, लेकिन मुल्क के इतिहास के इस दौर में तो ऐसी हस्ती ढूंढने से भी नहीं मिलेगी।'

मौलाना मजहरुल हक 22 दिसंबर, 1866 को पटना जिले के बहपुरा गांव में पैदा हुए। उनके पिता शेख अहमदुल्ली साहब थे, जो एक छोटे-से जमींदार और बहुत भले आदमी थे। वह अपने पिता के इकलौते बेटे थे। उनकी प्रारंभिक शिक्षा घर में हुई। वह 1876 में पटना कॉलजिएट में दाखिल हुए और 1886 में मैट्रिक पास करके पटना कॉलेज में नाम लिखाया। मगर 1887 में केनिंग कॉलेज में दाखिला लेने के लिए लखनऊ चले गए। वहीं उनके दिल में इंग्लैंड जाने का शौक पैदा हुआ। उस जमाने में बहुत से नवयुवक यूरोप जा रहे थे। मगर घर वालों से आज्ञा मिलने की आशा नहीं थी, इसलिए वह चुपचाप ही बिना किसी को बताये हुए मुंबई पहुंच गए और हाजियों के जहाज में बैठकर अदन पहुंच गए। यहां उनके सारे पैसे खत्म हो गए। मजबूरन उन्होंने अपने पिता को सूचना दी और उनसे मदद मांगी। उनके पिता ने उनको रुपये भेज दिए और वह लंदन पहुंच गए। यह एक संयोग की ही बात है कि इस जहाज में महात्मा गांधी भी यात्रा कर रहे थे । जहाज में दोनों में अच्छी मित्रता हो गई, जो हमेशा कायम रही ।

वह 5 दिसंबर, 1888 को लंदन पहुंचे थे और तीन साल इंग्लैंड में रहे व बैरिस्टरी की डिग्री लेकर भारत वापस आये और पटना में प्रैक्टिस करने लगे। एक साल बाद वह यू.पी. जूडिशियल सर्विस में शामिल हो गए। मगर जब उन्होंने देखा कि अंग्रेज अफसर अपने अधीनस्थ भारतीय कर्मचारियों के साथ अच्छा बरताव नहीं करते और उन्हें नीची निगाह से देखते हैं, तो उन्होंने 1896 में त्यागपत्र दे दिया और छपरा चले आए और वहीं प्रैक्टिस करनी शुरू कर दी। उसके बाद से उन्होंने देश की आजादी और समाज की भलाई के कामों में हिस्सा लेना शुरू किया। 1906 में वह पटना चले आये और वहीं प्रैक्टिस करने लगे। थोड़े समय में ही उनकी गणना चोटी के वकीलों में होने लगी और उन्होंने बहुत बड़े-बड़े मुकदमों की पैरवी की। 1913 में कानपुर में एक सड़क चौड़ी करने के लिए अंग्रेज अधिकारियों ने एक मस्जिद का कुछ हिस्सा तोड़ दिया, जिस पर मुसलमानों ने अंग्रेजी सरकार के विरुद्ध आंदोलन शुरू किया। इस पर अंग्रेज अफसरों ने बहुत सख्ती की और गोली चलाई, जिसमें कई आदमी मारे गए। अंग्रेज अफसरों के डर से कोई स्थानीय वकील या बैरिस्टर इस मुकदमे की पैरवी करने के लिए तैयार नहीं था। तब मौलाना मजहरुल हक कानपुर पहुंचे और बिना किसी फीस के यह मुकदमा अपने हाथों में ले लिया। अंत में वायसराय के बीच-बचाव से फैसला हो गया ।

इस जमाने में वह कांग्रेस के अधिवेशनों में हिस्सा लेने लगे थे और 1912 में पटना में कांग्रेस का जो अधिवेशन हुआ था, उसकी स्वागत समिति के अध्यक्ष चुने गए। इस अवसर पर उन्होंने जो भाषण दिया था, वह देशप्रेम और आजादी की लगन की वजह से आज तक याद किया जाता है। उन्होंने कहा था, 'देशप्रेम का यह तकाजा है कि किसी के सामने हमारा सिर न झुके। हम सारे देश के लोग कांग्रेस के साथ है और

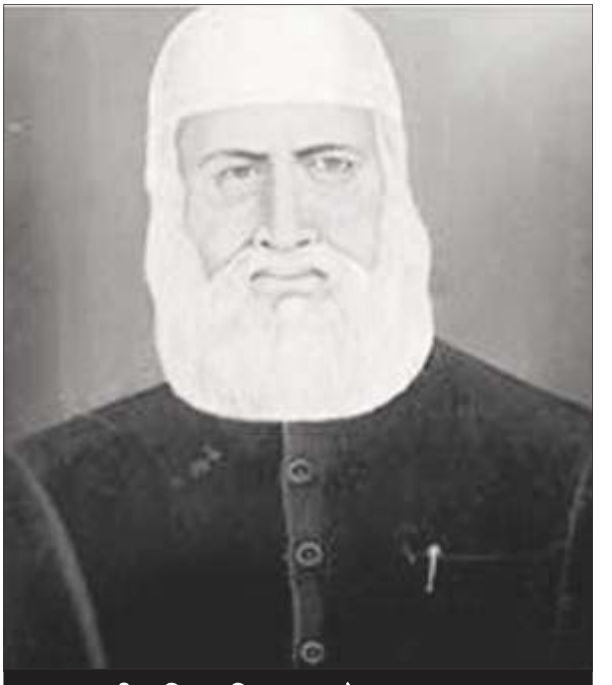

त्याग की अभिनव मिसाल : मौलाना मजहरुल हक
(22 दिसम्बर 1866- 2 जनवरी 1930)

जो कांग्रेस का आदर्श है, वही हमारा आदर्श है।' 1916 के कांग्रेस-अधिवेशन में भाषण देते हुए उन्होंने कहा था- 'मेरे विचार में भाषण देने और बातें बनाने का समय गुजर गया। अब काम का समय है। आप भारत के लिए होमरूल या स्वशासन मांग रहे हैं। क्या आप समझते हैं कि यह चीज केवल मांगने से मिल जाएगी? हमें अपने शासकों को यह दिखाना होगा कि भारत का हर आदमी, हर स्त्री और हर बच्चा सेल्फ गवर्नमेंट हासिल करने के लिए किस तरह अटल है।'

1917 में जब गांधीजी चंपारण गए तो मौलाना मजहरुल हक ने उन्हें अपने घर पर ठहराया। जब गांधीजी पर मोतीहारी में धारा 144 का उल्लंघन करने के लिए मुकदमा चलाया गया तो वह फौरन मोतीहारी पहुंचे। बाद में महात्मा गांधी पर से मुकदमा उठा लिया गया और गांधीजी मजहरुल हक के साथ छपरा चले गए। गांधीजी के साथ उनके मेल-जोल की वजह से मौलाना साहब की जिंदगी में बड़ा परिवर्तन हुआ। उन्होंने रईसाना ठाठ-बाट की जिंदगी छोड़कर सादगी को अपना लिया और अपना सब कुछ देश सेवा के लिए अर्पित कर दिया। 1917 में मांटेग्यू मिशन भारत आया था और उसने प्रशासनिक सुधार के जो सुझाव दिए थे, उसे 1919 के गवर्नमेंट ऑफ इंडिया एक्ट में सम्मिलित कर लिया गया। लेकिन इन तथाकथित सुधारों से सारे देश में बड़ी निराशा हुई। पहले महायुद्ध की वजह से देश की राजनीतिक स्थिति पर बहुत असर पड़ा था। फिर भारत सरकार ने रौलेट एक्ट पास करके लोगों को दबाना चाहा। इन सब बातों से सारे देश में हलचल मच गई और महात्मा गांधी ने घोषणा की कि अगर यह कानून उठा नहीं लिया गया तो इसके विरुद्ध आंदोलन किया जाएगा। इस घोषणा के बाद ही

इस तरह बिहार में राजनीतिक जागृति पैदा कराने में उनका बहुत बड़ा हाथ रहा। आजादी के बाद जो लोग मशहूर हुए और आगे आये, उनमें अधिकतर ऐसे लोग थे जो मौलाना साहब के साथी थे। 1926 में अखिल भारतीय कांग्रेस के गुवाहाटी-अधिवेशन की अध्यक्षता के लिए उनका नाम प्रस्तुत हुआ था, मगर उन्होंने इसे कबूल करने से इन्कार कर दिया, क्योंकि उस वक्त वह राजनीतिक जीवन से संन्यास ले चुके थे और एक फकीर का जीवन बिता रहे थे। डॉ. पट्टाभि सीतारमैया ने कांग्रेस के इतिहास में उनके बारे में लिखा है : 'उन्होंने अपने जीवन का आखिरी हिस्सा न केवल एकांत में गुजारा, बल्कि एक सच्चे साधु के रूप में बिताया।' अपने जीवन के अंतिम दिनों में वह बिल्कुल साधु हो गए। उन्होंने लंबी दाढ़ी रख ली थी, बड़े मामूली कपड़े पहनते थे और सादे ढंग से रहते थे। वह सारन जिले के गांव फरीदपुर चले आए और वहीं अपने मकान में रहने लगे। इस मकान का नाम उन्होंने 'आशियाना' रखा था। गांधीजी ने उनके जीवन के बारे में लिखा है कि 'वह हमारे मतभेदों से तंग आकर दुनिया से अलग-थलग हो गए थे। वह बहुत बड़े देशप्रेमी, सच्चे मुसलमान और एक बड़े दार्शनिक थे। पहले वह बड़े रईसाना ठाठ-बाट से रहते थे, लेकिन जब असहयोग आंदोलन चला तो उन्होंने सब कुछ छोड़-छाड़कर फकीरी का जीवन अपना लिया।

सारे देश में सत्याग्रह तथा हड़ताल, जलसे-जुलूस का सिलसिला शुरू हो गया। महात्मा गांधी पंजाब में गिरफ्तार कर लिए गए और मुंबई भेज दिए गए। मौलाना मजहरुल हक ने भी बड़े जोश-खरोश के साथ ऐसे जलसों- जुलूसों में हिस्सा लिया और असहयोग आंदोलन का तूफानी दौर शुरू हो गया। असहयोग आंदोलन का एक बुनियादी कार्यक्रम यह था कि ऐसे स्कूलों और कॉलेजों से विद्यार्थियों को हटा लिया जाए जो सरकार से सहायता पाते हैं। महात्मा गांधी का विचार था कि बिहार में राष्ट्रीय विश्वविद्यालय स्थापित किया जाए। इसलिए जो सात-आठ हजार रुपये उन्होंने बिहार में जमा किए थे, वे स्थानीय नेताओं को दे दिए। इस तरह 5 जनवरी, 1921 को बिहार नेशनल कॉलेज की स्थापना हुई । उस समय एक महाविद्यापीठ भी स्थापित किया गया। इस विद्यापीठ के कुलपति मौलाना मजहरुल हक बनाए गए। उस जमाने की एक नाटकीय घटना का विवरण डॉ. राजेंद्र प्रसाद ने अपनी आत्मकथा में दिया है । वह लिखते हैं, बिहार स्कूल ऑफ इंजीनियरिंग के विद्यार्थी, जिन्होंने असहयोग आंदोलन के जमाने में कॉलेज छोड़ दिया था, मौलाना साहब के पास पहुंचे और उनसे कहा कि उनके लिए कोई समुचित व्यवस्था की जाए। हक साहब ऐसे नेताओं में नहीं थे, जो सिर्फ जबानी भाषण देते हैं और कागजी सुझाव देते हैं। वह सच्चे अर्थों में एक सिपाही थे। वह केवल कार्य करने पर विश्वास करते थे। उन्होंने फौरन अपनी सजी-सजाई कोठी 'सिकंदर मंजिल' छोड़ दी और उन विद्यार्थियों के साथ पटना-दानापुर रोड के नजदीक की एक बाड़ में शरण ली। उन्होंने कुछ झोंपड़ियां खड़ी कीं, फूल लगाए और देखते ही देखते एक आश्रम बन गया। इस तरह सिकंदर मंजिल की ठाठ-बाट का जीवन गुजारने वाला व्यक्ति बाग में बनी हुई झोंपड़ी का वासी बन गया। मौलाना मजहरुल हक ने इस स्थान का नाम 'सदाकत आश्रम' रखा। आजकल बिहार कांग्रेस कमेटी का मुख्यालय इसी में है।

सितंबर 1921 में उन्होंने पटना से एक अंग्रेजी साप्ताहिक मदरलैंड जारी किया, जो सारे देश में बहुत प्रसिद्ध हो गया। उन्होंने इस अखबार द्वारा प्रचार किया कि सही प्रजातंत्र वही है, जिसमें सबकी भावनाओं पर ध्यान दिया जाए, किसी को छोटा या बड़ा न समझा जाए। वह हिंदू-मुस्लिम एकता और भाईचारे के भी बहुत बड़े प्रचारक थे। उन्होंने अपने भाषणों और लेखों में बार-बार इस बात पर जोर दिया है कि भारत की भलाई इसी में है कि दोनों धर्मों के लोग मिल-जुलकर रहें। अपने अखबार में उन्होंने ब्रिटिश सरकार के अत्याचारों और आजादी के आंदोलनों के लिए भी बहुत कुछ लिखा। सरकार के खिलाफ लिखने के लिए उन पर मुकदमा भी चलाया गया और एक हजार रुपये जुर्माना किया गया। मगर उन्होंने जुर्माना देने से इन्कार कर दिया और उसके बजाय तीन महीने के लिए जेल चले गए और उनका अखबार बंद हो गया। मौलाना मजहरुल हक उस समय देश के चोटी के नेता थे। महात्मा गांधी, पंडित मोतीलाल नेहरू, हकीम अजमल खां, डॉ. अंसारी, मौलाना आजाद और दूसरे तमाम बड़े नेताओं से उनके गहरे संबंध थे।

इस तरह बिहार में राजनीतिक जागृति पैदा कराने में उनका बहुत बड़ा हाथ रहा। आजादी के बाद जो लोग मशहूर हुए और आगे आये, उनमें अधिकतर ऐसे लोग थे जो मौलाना साहब के साथी थे। 1926 में अखिल भारतीय कांग्रेस के गुवाहाटी-अधिवेशन की अध्यक्षता के लिए उनका नाम प्रस्तुत हुआ था, मगर उन्होंने इसे कबूल करने से इन्कार कर दिया, क्योंकि उस वक्त वह राजनीतिक जीवन से संन्यास ले चुके थे और एक फकीर का जीवन बिता रहे थे। डॉ. पट्टाभि सीतारमैया ने कांग्रेस के इतिहास में उनके बारे में लिखा है, 'उन्होंने अपने जीवन का आखिरी हिस्सा न केवल एकांत में गुजारा, बल्कि एक सच्चे साधु के रूप में बिताया।' अपने जीवन के अंतिम दिनों में वह बिल्कुल साधु हो गए। उन्होंने लंबी दाढ़ी रख ली थी, बड़े मामूली कपड़े पहनते थे और सादे ढंग से रहते थे। वह सारन जिले के गांव फरीदपुर चले आये और वहीं अपने मकान में रहने लगे। इस मकान का नाम उन्होंने 'आशियाना' रखा था। गांधीजी ने उनके जीवन के बारे में लिखा है कि 'वह हमारे मतभेदों से तंग आकर दुनिया से अलग-थलग हो गए थे। वह बहुत बड़े देशप्रेमी, सच्चे मुसलमान और एक बड़े दार्शनिक थे। पहले वह बड़े रईसाना ठाठ-बाट से रहते थे, लेकिन जब असहयोग आंदोलन चला तो उन्होंने सब कुछ छोड़-छाड़कर फकीरी का जीवन अपना लिया। उनकी कथनी और करनी में कोई फर्क नहीं था। उनका स्थापित किया हुआ सदाकत आश्रम भारत के दोनों धर्मों को मिलाने का काम कर सकता है।'

27 दिसंबर, 1929 को उन पर पक्षाघात का हमला हुआ और 2 जनवरी, 1930 को वह परलोक सिधार गए और अपने मकान के बगीचे के एक कोने में दफन हुए। उसी वक्त लाहौर में कांग्रेस का सम्मेलन हो रहा था। जब यह दुखभरी खबर वहां पहुंची तो सबने खड़े होकर उन्हें श्रद्धांजलि अर्पित की। उनके निधन पर सारे देश में शोक मनाया गया और तमाम बड़े-बड़े नेताओं ने उनके कार्य और देश सेवाओं की सराहना करते हुए श्रद्धांजलि भेंट की। पंडित जवाहरलाल नेहरू ने उनके बारे में कहा था कि वह असहयोग आंदोलन के बहुत बड़े नेताओं में थे और यह हमारा धर्म है कि हम उनकी याद मनाएं। स्वतंत्र भारत मौलाना साहब की महान सेवाओं को हमेशा याद रखेगा।

स्रोत : भारत के गौरव सीरीज पुस्तक

■

विनय कुमार सिंह

शहीद बैजू मंडल : एक गुमनाम शहीद

एक गुमनाम देशभक्त : बैजू मंडल
(24 अक्टूबर 1904-16 दिसम्बर 1930)

शहीद बैजू मंडल का संक्षिप्त जीवनवृत्त

जन्म तिथि	:	24 अक्तूबर 1904
पिता	:	चमरू मंडल
माता	:	उमदा देवी
ग्राम	:	बरियारपुर बस्ती
पोस्ट + थाना	:	बरियारपुर
जिला	:	मुंगेर
राज्य	:	बिहार
पत्नी	:	चुनकी देवी
पुत्री	:	सुरती देवी एवं फाल्गुनी देवी
पुत्र	:	जगदीश प्रसाद सिंह (अवकाश प्राप्त शिक्षक)
काम	:	रेलकर्मी , मोल्डर (द्वितीय श्रेणी) ब्रास फाउंड री,रेल कारखाना जमालपुर
टिकट नं.	:	10156
भाई	:	शिवनाथ मंडल एवं मिसरी मंडल'
बहन	:	कल बातो देवी
आरोप	:	ब्रास फाउंड री के शॉप में रेल अधिकारी को आग की भट्ठी में झोंक कर जान मारने और कई अंग्रेज पुलिस को लोहे की रॉड से जानलेवा हमला।

शहीदों की चिताओं पर लगेंगे हर बरस मेले
वतन पर मारनेवालों का यही बाकी निशां होगा।
कभी वह दिन भी आएगा जब अपना राज देखेंगे,
जब अपनी ही जमीं होगी और अपना आसमां होगा।

यह शेर जगदंबा प्रसाद मिश्र 'हितेषी' का है जो उन्होंने वर्ष 1916 ई. में लिखा था। हितेषी न सिर्फ एक शायर थे बल्कि स्वयं एक रुध हुए क्रांतिकारी थे। उनका सपना रहा होगा कि देश जब आजाद होगा तो आजादी के लिए अपने प्राणों की आहुति देने वाले स्वाधीनता सेनानियों को समुचित सम्मान प्राप्त होगा, लेकिन कुछ खास लोगों को तो वह सम्मान अवश्य मिला जिनका नाम इतिहास की पुस्तकों में दर्ज हो सका लेकिन अधिकांश ऐसे स्वाधीनता सेनानी हुए जिनका नाम इतिहास में दर्ज नहीं हो सका और वे गुमनामी के अंधेरे में धकेल दिए गए। ऐसे ही एक गुमनाम शहीद बैजू मंडल को उनकी शहादत के 90 वें वर्ष पर याद कर रहे हैं। जिनका नाम इतिहास में दर्ज नहीं हो सका है।

अंगिका व हिन्दी के कवि और शहीद बैजू मंडल के पौत्र सुधीर कुमार प्रोग्रामर कहते हैं कि वे जब कभी भी अपनी दादी से बचपन में अपने दादा के बारे में जिज्ञासावश पूछते थे तो अक्सर दादी उन्हें चुप करा देती थी। शायद वे उस दुखद घटना को याद नहीं करना चाहती थी लेकिन एक बार गुस्से में आकर बोलीं, 'चुपचाप सुत - तोरो दादा मुंगेर घाट में लकड़ी चुने होतो।' 'मुझोसा' गैबिया 'अरु' 'चंडिया' के फेरा मे जान दे देलको तोरो बाबा ने। 'मंगलवार दिन रहे अरु एकादशी, अंग्रेज पुलिस तोरो बाबा के पुल पर गोली-बंदूक से भूंजी देलको।'

शहीद बैजू मंडल का जन्म बरियारपुर प्रखंड अंतर्गत बरियारपुर बस्ती में 24 अक्तूबर 1904 ई. में हुआ था। उनके पिता चमरू मंडल कुर्मी जाति समूह के एक औसत खेतिहर थे। उनका विवाह मुंगेर जिला अंतर्गत बरियारपुर प्रखंड के खड़िया गांव में चुनकी देवी के साथ हुआ था। देश में अंग्रेजों के विरुद्ध स्वाधीनता आंदोलन तेज होने लगा था। पूस का महीना था, इस मास में पुसभत्ता मनाने का प्रचलन इस क्षेत्र में रहा है। ऐसे ही मौके पर महेशपुर निवासी गैबी प्रसाद सिंह, चोरगांव निवासी चंडी मंडल और तिलकपुर निवासी सियाराम सिंह आदि से बैजू मंडल की मुलाकात हुई। गैबी प्रसाद सिंह ने अंग्रेजों के अत्याचार की कहानी सुनाकर आंदोलनकारियों के समूह में शामिल होने के लिए प्रेरित किया। सियाराम सिंह ने सभी क्रांतिकारियों से शपथ लेने को कहा, 'कि पकड़े जाने पर किसी भी हालत में अन्य साथियों का नाम-पता नहीं बताना है। वचन और वक्त के पक्के बैजू मंडल ने हामी भर दी और कुछ ही दिनों में आंदोलनकारियों की टीम का बड़ा हिस्सा बन गया। जब कभी भी मौका मिलता अंग्रेजों की संपत्तियों को नुकसान पहुंचाते। चंडी और गैबी बरियारपुर आकर बैजू से मिलते और अंग्रेजों के विरुद्ध योजना बनाते। बैजू मंडल जब कभी भी अपने ससुराल खड़िया आते मौका पाकर गांव के दफाली मंडल के साथ चंडी मंडल से मिलने उनके गांव चोरगांव चले जाते थे। यह सब देख-सुनकर उनकी पत्नी चुनकी देवी को कुछ संदेह हुआ। उन्होंने बैजू को ऐसा नहीं करने से मना किया। किसी कारणवश सियाराम सिंह के दल से इनका संबंध विच्छेद हो गया। अब बैजू मंडल ही चोरगांव आकर चंडी मंडल के साथ योजना बनाते और उसे अमल में लाते। एक दिन अंग्रेज पुलिस ने भारतीय झंडा के साथ बैजू को पकड़कर दिनभर हाजत में रखा। परिवार के लोग कुछ शर्त पर छुड़ाकर घर लाये। इनके बड़े भाई शिवनाथ मंडल जो जमालपुर रेल कारखाना में राजमिस्त्री का काम करते थे वे बैजू को अपने साथ कारखाना ले जाकर काम पर लगा दिया। कुछ दिन काम सीखने के बाद बैजू मंडल जमालपुर कारखाना में ही ब्रास फाउंड री में द्वितीय श्रेणी के कारीगर बन गए। जिनका टिकट नं.-10156 था। उनके कार्य करने की कुशलता और तत्परता का वहां के अधिकारी लोहा मानने लगे। लेकिन कार्यभार बढ़ता

एक दिन काम के आखिरी समय में आव देखा न ताव,बैजू मंडल एक अन्य आंदोलनकारी सहयोगी के सहयोग से क्रूर किस्म के अंग्रेज अधिकारी को चुपचाप कंटीले तार से बांधकर ब्रास फाउंड री की भट्ठी में झोंक दिया और यूनिफॉर्म बदलकर श्रमिक गाड़ी (कुली गाड़ी) से घर के लिए निकल पड़े। इस घटना की भनक तक किसी को नहीं लगने दिया। लंबी अवधि के बाद बैजू मंडल घर आये थे। घर आने पर पता चला कि उन्हें एक पुत्र रत्न की प्राप्ति हुई है।अब वे एक पुत्र के पिता बन गए थे। बैजू अपने पुत्र को देखने व आशीष देने पहुंचा तो देखा कि बेटा आंखें बंद कर सोया हुआ है। बैजू ने प्यार से 'जागो' बेटा कहकर पुकारा और बेटा ने आंखें खोल दी। सब को आश्चर्य हुआ। तब से सभी उस बालक को 'जागो' कहकर ही पुकारने लगे। बाद में वही जागो का नाम जगदीश हो गया। बैजू मंडल महात्मा गांधी के 'असहयोग आंदोलन' के प्रबल समर्थक थे। असहयोग आंदोलन समूचे देश में विकराल रूप धारण कर लिया था। गैबी प्रसाद सिंह और चंडी मंडल सहित करीब दर्जन भर आंदोलनकारियों का जत्था (दल) बन गया था। 'जमालपुर कारखाना' के भी कई साथी आंदोलन के समर्थक हो गए थे। आखिर 16 दिसंबर 1930 के दिन बैजू मंडल के आह्वान पर कुछ रेलकर्मी ने काम का बहिष्कार करने का निर्णय लिया।

चला गया। कारखाना में अंग्रेज अधिकारियों के तौर तरीके, अपमान एवं यातनाएं देने के तरीके ने उन्हें बागी बनने पर मजबूर कर दिया। एक बार पुनः आजादी का भूत उनके माथे पर सवार हो गया। वे समय पर कारखाना तो आ जाते, लेकिन लौट कर घर से बाहर ही अंग्रेजों के विरुद्ध योजना बनाने में लगे रहते। उन्होंने अपनी एक टीम खड़ी कर ली थी। साथियों के साथ अच्छा-खासा समय अंग्रेजों के विरुद्ध बगावत करने की रणनीति पर काम करते रहे।

एक दिन काम के आखिरी समय में आव देखा न ताव,बैजू मंडल एक अन्य आंदोलनकारी सहयोगी के सहयोग से क्रूर किस्म के अंग्रेज अधिकारी को चुपचाप कंटीले तार से बांधकर ब्रास फाउंड री की भट्ठी में झोंक दिया और यूनिफॉर्म बदलकर श्रमिक गाड़ी (कुली गाड़ी) से घर के लिए निकल पड़े। इस घटना की भनक तक किसी को नहीं लगने दिया। लंबी अवधि के बाद बैजू मंडल घर आये थे। घर आने पर पता चला कि उन्हें एक पुत्र रत्न की प्राप्ति हुई है। अब वे एक पुत्र के पिता बन गए थे। बैजू अपने पुत्र को देखने व आशीष देने पहुंचा तो देखा कि बेटा आंखें बंद कर सोया हुआ है। बैजू ने प्यार से 'जागो' बेटा कहकर पुकारा और बेटा ने आंखें खोल दी। सब को आश्चर्य हुआ। तब से सभी उस बालक को 'जागो' कहकर ही पुकारने लगे। बाद में वही जागो का नाम जगदीश हो गया।

बैजू मंडल महात्मा गांधी के 'असहयोग आंदोलन' के प्रबल समर्थक थे। असहयोग आंदोलन समूचे देश में विकराल रूप धारण कर लिया था। गैबी प्रसाद सिंह और चंडी मंडल सहित करीब दर्जन भर आंदोलनकारियों का जत्था (दल) बन गया था। 'जमालपुर कारखाना' के भी कई साथी आंदोलन के समर्थक हो गए थे। आखिर 16 दिसंबर 1930 के दिन बैजू मंडल के आह्वान पर कुछ रेलकर्मी ने काम का बहिष्कार करने का निर्णय लिया। कारखाना में उपस्थिति दर्ज करने के बाद अंग्रेज सिपाहियों से बगावत करते हुए रेलकर्मी छोटा पुल (जमालपुर रेलवे स्टेशन के करीब दक्षिणी ओर) होकर नारा लगाते हुए बाहर निकलने लगे। देखते-देखते अंग्रेजों की फौज दल-बल के साथ पहुंचकर आंदोलनकारियों को बाहर आने से रोकने लगी। कुछ रेलकर्मी अंग्रेजी फौज की डर से पुनः काम पर वापस लौट गए। बैजू मंडल के बड़े भाई शिवनाथ मंडल को पुलिस पकड़कर घसीटते हुए कारखाना के अंदर ले जाने लगी, तभी बैजू मंडल लोहे के रॉड के टुकड़े और खंती से अंग्रेजी फौज को ललकारने लगे और चीख-चीखकर कहने लगे कि समय का इंतजार करो अंग्रेजो, तुम लोगों की भी वही दशा करेंगे जो ब्रास फाउंड री के दोगले अधिकारी को आग की भट्ठी में झोंक कर किया था। आंदोलनकारी पुल के ऊपर से ही अंग्रेजी फौज के ऊपर लोहे की रॉड और खंती से वार करने लगे। कई अंग्रेज पुलिस बुरी तरह से घायल होकर गिर पड़े। बैजू मंडल की खूनी मंशा को देखकर अंग्रेज पुलिस ने दनादन कई गोलियां बैजू मंडल के गले और सीने में उतर दिया। बैजू मंडल वहीं शहीद हो गए। इस दुखद समाचार को सुनते ही उनकी पत्नी चुनकी देवी, अपनी दो पुत्री और एक पुत्र को गोद में लेकर दहाड़ मारकर रो रही थी और बार-बार गैबी प्रसाद सिंह और चंडी मंडल को कोस रही थी हो गया न कलेजा ठंडा ,भाग गया न फिरंगी। अब कौन मेरे तीन- तीन अनाथ बच्चों का भरण-पोषण करेगा। 'दूसरे दिन बैजू मंडल का पार्थिव शरीर उनके परिजन को सौंप दिया गया। जिसका अंतिम संस्कार मुंगेर घाट में किया गया। शहीद की विधवा चुनकी देवी अपने तीनों संतान को लेकर नैहर (खड़िया) चली गईं।

बैजू मंडल की शहादत की करीब दो वर्ष बाद ही 15 फरवरी 1932 को तारापुर (मुंगेर)के थाना पर तिरंगा फहराने के क्रम में 13 आंदोलनकारियों के साथ महेशपुर निवासी गैबी प्रसाद सिंह और चोरगांव निवासी चंडी मंडल भी अंग्रेजों की गोली का शिकार होकर शहीद हो गए। वर्ष 1972 में शहीद बैजू मंडल के पुत्र जगदीश प्रसाद सिंह (शिक्षक) ने रेल मंत्रालय भारत सरकार को पर्याप्त साक्ष्य के साथ क्षतिपूर्ति हेतु आवेदन दिया था। लेकिन उसकी कोई नोटिस नहीं ली गई। खड़िया-पीपरा हॉल्ट के उद्घाटन के अवसर पर 24 दिसंबर 2002 को तत्कालीन रेल मंत्री नीतीश कुमार को पूरे अभिलेख के साथ इस गोली कांड की जांच तथा राहत देने संबंधी आवेदन दिया गया था, लेकिन परिणाम वही ढाक के तीन पात। 18 फरवरी 2005 को केंद्रीय जल संसाधन राज्य मंत्री,भारत सरकार जयप्रकाश नारायण यादव के माध्यम से तत्कालीन रेल मंत्री लालू प्रसाद यादव को आवेदन देकर स्वाधीनता आंदोलन में शहीद हुए परिजन को मिलने वाली सुविधा व क्षतिपूर्ति की मांग की गई। लेकिन अब तक निराशा ही हाथ लगी है। शायद इसी स्थिति को भांपते हुए शहीद चंद्रशेखर आजाद ने 'हितेषी' के शेर में थोड़ा बदलाव करके कहा था :

'शहीदों की चिताओं पर पड़ेंगे खाक के ढेले,
वतन पर मिटने वालों का यही बाकी निशां होगा'।

(लेखक समसामयिक विषयों के टिप्पणीकार हैं।)

■

दुर्गेश कुमार

जगदीश मास्टर : एक जांबाज योद्धा

कुछ नायक वैसे होते हैं जो जबरिया कलम से गढ़े जाते हैं। कुछ वैसे होते हैं जो त्याग और बलिदान से अमिट छाप छोड़ जाते हैं और कलम के चितेरे उन्हें पन्ने पर उतारने की कोशिश करते हैं। आज हम उस नायक की बात करेंगे जिनके बारे में कलम तो चली, लेकिन उनकी चर्चा का दायरा सीमित ही रहा है। इस नायक को एक बड़ा वर्ग खलनायक के रूप में देखता है। शायद इसलिए बड़े-बड़े साहित्यकारों का पात्र होने के बावजूद इस नायक की चर्चा बहुत कम होती है। जिसने सामंतों से मिले अपमान की घूंट पीने से इन्कार करते हुए अपनी जवान पत्नी से कहा कि तुम अपनी मांग का सिंदूर पोंछ दो। क्योंकि जिसके पति की प्रतिष्ठा का हनन होता है वह औरत विधवा की तरह ही होती हैं। इतना सुनते ही उस क्रान्तिकारी पुरुष की क्रान्तिकारी महिला ने अपनी मांग से सिंदूर पोछ लिया।

कभी-कभी यह समाज बहुत निर्मम हो जाता है। वह भुला देता है अपने नायकों को, वह मोल नहीं समझता है अपने योद्धाओं का जबकि उनके बलिदान की बदौलत ही यह समाज खुली हवा में सांस ले रहा होता है। देश आजाद होने के बाद समाज की दशा स्वतः नहीं सुधरी। इसके लिए हजारों लोगों ने कीमत चुकाई है। ऐसे ही एक शख्स का नाम है जगदीश महतो उर्फ जगदीश मास्टर जिन्होंने पूरी जिंदगी गरीबों के अधिकार और हक के लिए जिया। उन्होंने 37 साल की उम्र में अधिकार और हक के लिए अपनी मौत को गले लगाया। 1960 के दशक में भोजपुर और बक्सर एक ही जिले थे। भोजपुर दो तरफ से गंगा और सोन से घिरा हुआ है। कुल ब्लॉक 16 थे। भोजपुर की आबो हवा में सामंतवाद की से सिसकती हुई आवाजें थीं, सूखा और अकाल था। भोजपुर का एक ब्लॉक सहार आरा शहर से 40 किलोमीटर दूर सामंती मिजाज के लिए कुख्यात था। यह भोजपुर का वह इलाका है जहां दलितों की आबादी अन्य क्षेत्रों के मुकाबले अधिक हैं। इसी ब्लॉक में एक गांव है जिसे एकवारी कहते हैं। इसी गांव में कोयरी समाज के किसान परिवार में 10 दिसंबर 1935 को ही कॉमरेड जगदीश का जन्म हुआ था।

जगदीश महतो पढ़ाई और शारीरिक कद काठी में औसत थे। वह रोज अपने गांव और आसपास के जुल्म की कहानियां देखते थे। सामंती सोच के दबंग लोग गरीबों, कमजोर लोगों की बहू-बेटियों की प्रतिष्ठा का हनन करते, जोर जबदस्ती करते, यह देख-सुन जगदीश महतो के युवा मन में विद्रोही जन्म ले रहा था। उन दिनों खेतों में जबरन मजदूरी के लिए मजबूर करना आम बात थी। जगदीश महतो आरा में रहकर पढाई पूरी कर रहे ये। गांव वापस आते तो सामंती जुल्म की कहानियां सुनकर व्यथित हो जाते थे। जगदीश मास्टर के बारे में कम लिखा गया है। किन्तु महाश्वेता देवी की पुस्तक मास्टर साब में उनकी कहानी की झलक मिल जाती है। जब सामंतवाद की दलदल में फंसे भोजपुर के एकवारी गांव में दलितों, वंचितों, गरीबों की बहू-बेटियां की अस्मिता तार-तार हो रहीं थीं तब युवक जगदीश महतो के दिमाग में विद्रोह पनप रहा था। स्कूली शिक्षा प्राप्त करने के बाद वह जैन स्कूल आरा में विज्ञान के शिक्षक नियुक्त हुए। जगदीश मास्टर गांव आते तो रामेश्वर अहीर बार-बार ताने मारते कि पढ़ाई किसलिए किए हो, अपने लोगों को छोड़कर चले जाओगे। उधर बचपन से लेकर जवानी तक जगदीश

मास्टर जगदीश

सामंतवाद पर नकेल कसती एक बेखौफ आवाज

(10 दिसम्बर 1935-10 दिसम्बर 1985)

महतो ने कई ऐसी घटनाओं को देखा था जिसकी वजह से उनके मन का विद्रोही बार-बार दहाड़ लगाता था। ऐसे में ही 1967 के चुनाव में सहार विधानसभा से कम्युनिस्ट पार्टी के उम्मीदवार थे एकवारी पंचायत के मुखिया रामनरेश राम। राम नरेश राम को समर्थन के लिए पढ़े-लिखे जगदीश मास्टर, जो मुखर वक्ता भी थे, का साथ मिल गया। सामंत जगदीश मास्टर से और चिढ़े हुए थे जबकि अगड़ी जातियों के समर्थन से प्रजा सोशलिस्ट पार्टी की तरफ से उम्मीदवार थे राजदेव राम। इस चुनाव में एकवारी गांव में अगड़ी जातियों के लोग बूथों को कब्जा करने की नीयत से जमा हुए थे। लेकिन इसकी खबर पाकर सभी बूथों पर कम्युनिस्ट पार्टी के समर्थक भी जमा हुए थे। एकवारी के दबंग नथुनी सिंह ने जब यह देखा कि कहीं कोई चारा नहीं चल रहा है तो अपने सभी लठैत को लेकर एक ही बूथ पर जमा हुए और बंदूक का भय दिखा कर वोटरों को हटा कर फर्जी वोट डालने लगा। खबर पहुंचते ही जगदीश मास्टर अपने एक साथी लोहा चमार के साथ पहुंचे। नथुनी सिंह को इसी का इंतजार था। जगदीश मास्टर पर लाठियों की बरसात कर दी गई। वो नीचे गिर पड़े।

लोहा चमार मदद केलिए चिल्ला रहा था। तब इधर से भी लोग लाठियां चलाने लगे। नथुनी सिंह के लोगों की भी धुनाई हुई। लेकिन मास्टर साहब बेहोश खून से लथपथ थे। अस्पताल ले जाया गया। हाथ पांव

और सीने की हड्डियां टूट चुकी थी। शरीर नीला पड़ गया था। डाक्टर ने कहा कि यह बच नहीं सकता है। पांच माह तक अस्पताल में रहने के बाद जगदीश मास्टर बच गए। यह साल 1968 था। आरा शहर ने एक शाम एक जुलूस को अपनी गलियों से गुजरते हुए देखा। गरीब और दलितों के हाथों जलती मशाले थीं। और उस जुलूस का नेतृत्व कर रहे थे मास्टर साब के नाम से चर्चित जगदीश महतो उर्फ जगदीश मास्टर। जुलूस में शामिल लोग नारा लगा रहे थे- हरिजनिस्तान लेके रहेंगे। पश्चिम बंगाल में नक्सलबाड़ी की घटना के बाद नक्सली गतिविधियां बिहार में भी तेजी से बढ़ रही थीं। मास्टर साहब जान-बूझकर विदाउट टिकट ट्रेन में यात्रा करके पकड़े गए, ताकि जेल में नक्सलियों से मुलाकात हो सके।

तारीख 10 दिसंबर 1972, कस्बा बिहिया। अनाज मंडी में दबंग धाना सिंह अपनी फसल बेचने के लिए आया था। सामंती मिजाज का धाना सिंह पर गरीबों का उत्पीड़न, महिलाओं की मान मर्यादा को तार-तार करने का गुनाह था। कहते हैं कि पुलिस प्रशासन भी उस पर कार्रवाई नहीं कर पाती थी। जगदीश महतो यानी मास्टर साहब ने सबक सिखाने के लिए बिहिया की अनाज मंडी की तरफ ट्रक से एक लिफ्ट लेकर अपने साथी रामायण राम के साथ बिहिया मंडी पहुंचते हैं। अनाज मंडी के पास उस दबंग धाना सिंह के सीने में पिस्तौल की गोलियां दाग कर काम तमाम कर देते हैं। फिर वह वापस लौटने के लिए बाग बागीचे का रास्ता पकड़ते हैं। किसी ने हल्ला किया चोर चोर, डकैत.. घटना स्थल से तकरीबन 700 मीटर वापस लौटे ही होंगे कि मुसहर जाति के लोग उनका पीछा करने लगे। आगे-आगे मास्टर साहब और उनके साथी रामायण राम... और पीछे-पीछे मुसहर जाति के लोगों की भीड़। अचानक एक व्यक्ति रास्ते के बीचों बीच सामने से आकर पकड़ लेता है। रामायण राम अपनी गोलियां उसके सीने में दाग देते हैं। तब तक मुशहर जाति के दर्जन भर लोगों की भीड़ उनकी तरफ लाठी-डंडों के साथ बढ़ रही थी। कामरेड रामायण राम ने पिस्तौल तानी तो जगदीश मास्टर ने कहा कि गोली मत चलाओ। इन्ही लोगों के हक के लिए हम लड़ रहे हैं, आज अपनी जान के लिए इन पर गोली चलाएंगे.. यह स्वीकार नहीं हैं। रामायण राम ने पिस्तौल नीचे कर लिया। मुसहर जाति के लोगो की भीड़ अपने नायक की तरफ बढ़ी जिसका नाम तो वो सुने थे लेकिन चेहरे से अनजान थे। भीड़ ने अपने ही नायक पर लाठियों से प्रहार किया। फिर अनगिनत लाठियों के प्रहार से जगदीश मास्टर और रामायण राम की मौत हो गई। लाश बिहिया थाना में गई तो तहकीकात में पता चला कि यह शव सामंतवाद का काल बन कर उभरे जगदीश मास्टर का है। लाठियां चलाने वाले मुसहरों की बस्ती में चीत्कार गूंज उठी। चूल्हे बुझे रहे। अफसोस के आंसू फूट पड़े कि यह कौन-सा पाप हो गया। जो हमारी लड़ाई लड़ता था हमने अनजाने उसी की हत्या कर दी। मुशहर की बस्ती में शोक की लहर छा गई। उनकी शहादत के बाद उनकी पत्नी को मलाल था कि पुलिस मार डालती, कोई जमींदार मार डालता तो कोई दुख नहीं होता। लेकिन उन्हें उन लोगों ने मार डाला। उनके अपने ही लोगों ने। बाद में उसी बस्ती में 10 दिसंबर 2012 को जगदीश मास्टर के स्मारक के लिए मुशहर समुदाय के एक व्यक्ति ने जमीन दी। जिस पर आज तक एक स्मारक नहीं बन सका है।

(लेखक बहुजन समाज सम-सामयिक मुद्दों के प्रखर टिप्पणीकार हैं।)

■

पठन-पाठन

नरेश नदीम

बिहार में खेतिहर जातियों की पड़ताल

प्रस्तुत पुस्तक 'अंग्रेजी राज में कुशवाहा खेतिहर' लेखक अजय कुमार के विस्तृत अध्ययन का परिणाम है। इस पुस्तक के माध्यम से उन्होंने अंग्रेजी राज के दरम्यान खेतिहर समाज के सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक पहलुओं में हो रहे परिवर्तन को उजागर किया है। हालांकि पुस्तक का शीर्षक अध्ययन एवं प्रस्तुति एक खास जाति के दायरे में बांधने की कोशिश करती है, परंतु लेखक जल्द ही शीर्षक के इस दायरे को तोड़ देता है। कुशवाहा जाति की विभिन्न उपजातियों यथा-कोइरी, काछी, दांगी, मुराव सैनी इत्यादि की बात करते हुए वे कब अहीर, कुर्मी, कैवर्त, कलिता, कोली इत्यादि की बात करने लगते हैं, पता नहीं चलता है। पुस्तक का उद्देश्य अंग्रेजी शासन के अधीन खेतिहर समाज की स्पष्ट रूपरेखा प्रस्तुत करना है। पुस्तक में कुल एक दर्जन अध्याय हैं-अंग्रेजी राज : कुशवाहा खेतिहर, जमींदारी प्रथा और कुशवाहा खेतिहर, कुशवाहा खेतिहरों में सामाजिक आंदोलन, खेतिहरों का जनेऊ आंदोलन, त्रिवेणी संघ का जन्म, त्रिवेणी संघ का विखराव, खेतिहर क्षत्रिय आंदोलन की पृष्ठभूमि, राष्ट्रीय आंदोलन और खेतिहर, कुशवाहा खेतिहरों में प्रतिरोध के स्वर, कुशवाहा मुसलमान, पहचान के संकट के बीच नई पहल तथा परिशिष्ट।

अंग्रेजी राज से पहले के कालखंड के भारतीय समाज में वर्ण और जाति में बंटे खेतिहर समुदाय के विविध पहलुओं को समेटे विवरण बहुत कम देखने को मिलता है। जो भी विवरण मिलते हैं उनमें वर्ण और जाति का संदर्भ तथाकथित शूद्र जातियों को अनुशासित या दंडित करने के लिए किया गया है। अंग्रेजी राज में पहली बार जातियों के समाजशास्त्रीय अध्ययन की शुरूआत हुई। इन अध्ययनों का भी उद्देश्य वही था, जो पूर्ववर्ती देशी-विदेशी शासकों का था। बस अन्तर यह था कि अंग्रेज रिपोर्ट बनाने में ईमानदारी बरतते थे। अंग्रेजी राज में तैयार विवरण आज भी संदर्भ के रूप में इस्तेमाल किए जाते हैं। अपनी उद्यमशीलता के लिए प्रसिद्ध यह खेतिहर जातियां सब्जियों फूलों और फलों के उत्पादन के लिए प्रसिद्ध हैं। हाट-बाजार के विकास में इन जातियों की उद्यमशीलता का महत्वपूर्ण योगदान है। प्रस्तुत पुस्तक 'अंग्रेजी राज में कुशवाहा खेतिहर' का प्रथम अध्याय है-'कुशवाहा खेतिहर'। इस अध्याय में लेखक अजय कुमार ने गुजरात के कोली खेतिहर से लेकर आसाम के कलिता जाति तक की खेती में भूमिका को रेखांकित किया है। इस अध्याय में कोयरी,माली-सैनी, काछी-मुराव और कैवर्त सहित समान व्यवसाय में सम्मिलित जातियों की सामाजिक स्थिति का वर्णन किया गया है। अंग्रेजी राज के उपलब्ध साक्ष्यों के आधार वे लिखते हैं कि ये जातियां सामान्यतः मध्यवर्ती किसान थे जो कृषि उत्पादों के उत्पादन, प्रबंधन और नियमन में अग्रणी थे। मानवशास्त्री डाल्टन को उद्धृत करते हुए लिखते हैं 'कोयरी-कुर्मी-काछी जैसी जातियां आर्यों से पूर्व की जातियों के वंशज थे। संभवतः इनकी पहचान अनार्य जातियों के रूप में थी।'

पुस्तक का दूसरा अध्याय 'जमींदारी प्रथा और कुशवाहा खेतिहर' नाम से है। इस अध्याय में लार्ड कार्नवालिस के समय खेती योग्य भूमि से संबंधित 'स्थायी बंदोबस्ती' नीति का खेतिहर समुदाय पर पड़ने वाले प्रभाव का आकलन किया गया है। भू-राजस्व की इस व्यवस्था

के तहत जमींदारों को कर वसूलने का अधिकार मिल गया। रैयतों को भी कुछ अधिकार मिले थे परंतु वे जमींदारों द्वारा व्यवहार में निष्प्रभावी कर दिये जाते थे। रैयतों को जमीन नीलाम होने का डर बना रहता था। 'नीलाम में बिकने वाली ऐसी जमीनों के खरीदार अधिकतर ईस्ट इंडिया कंपनी और अदालतों में काम करने वाले भारतीय कारिंदे और सूदखोर महाजन होते थे।' यह नया वर्ग रहते तो शहर में थे परंतु मिल्कियत गांवों में थी। इस व्यवस्था ने परिश्रमी खेतिहर समाज की जमीनें लील ली तथा उन्हें विपन्नता की ओर धकेला। 1911 ई. तक आते-आते बिहार में खेतिहर मजदूरों की संख्या एक करोड़ को पार कर गई थी, जो कि खेतिहर समुदाय की आबादी का एक तिहाई थी। सूदखोर महाजनों की मनमानी,जमींदारों की नाजायज वसूलियां और बेगार प्रथा ने खेतिहरों के जीवन को और भी कष्टप्रद बना दिया था।

पुस्तक का तीसरा अध्याय 'कुशवाहा खेतिहरों में सामाजिक आंदोलन' से संबंधित है। इस अध्याय में लेखक ने इस खेतिहर समुदाय के बहाने उत्तर भारत में उस समय चल रहे विभिन्न सुधारवादी आंदोलनों पर प्रकाश डाला है। कोयरी-महतो जाति की विभिन्न शाखाओं में सामाजिक एकीकरण के लिए 'कुशवाहा' नामक छतरी का इस्तेमाल किया गया। शिक्षा के प्रसार के साथ अमूमन सभी खेतिहर जातियों में यह प्रकिया उन दिनों चल रही थी। ग्वाला, गोप वह अहीर जातियां खुद को 'यादव' नामक छतरी के नीचे लाकर क्षत्रिय की घोषणा कर रहे थे। कुशवाहा भी खुद को लव-कुश नामक मिथकीय पात्र से जोड़कर क्षत्रिय होने का उद्घोष कर रहे थे। क्रिस्टोफर जेफ्फरलोट को उद्धृत करते हुए वे लिखते हैं,'तीन-चार खेतिहर जातियों को सांगठनिक स्तर पर एक जगह लाने का प्रयास उल्लेखनीय जरूर था। लेकिन राजनीतिक उद्देश्यों के लिए यह प्रयास परिणाम मूलक नहीं रहा।'

पुस्तक का चौथा अध्याय 'खेतिहरों का जनेऊ आंदोलन',पांचवां अध्याय 'त्रिवेणी संघ का जन्म', छठा अध्याय 'त्रिवेणी संघ के बिखराव' तथा सातवां अध्याय खेतिहर क्षत्रिय आंदोलन की पृष्ठभूमि से संबंधित है। अंग्रेजी राज में ब्राह्मण और राजपूत रैयतों को अन्य जातियों के रैयतों के मुकाबले एक तिहाई कम लगान देना पड़ता था। जाति आधारित लगान की व्यवस्था इतना असहनीय था कि कई बार तथाकथित शूद्र रैयत अपनी जमीन-जायदाद छोड़कर पलायन को मजबूर हो जाते थे। ऐसी परिस्थिति में उनमें खुद को क्षत्रिय घोषित होने की लालसा बढ़ना स्वाभाविक था। जनेऊ पहनो आंदोलन इसी सोच की उपज थी। लेखक इसे दर्ज करते हुए लिखते हैं,'जातीय लगान से बचने या मुक्ति पाने के लिए पिछड़ी जातियों के लिए एक ही रास्ता था कि सामाजिक सोपान में वे भी ऊंची जाति का होने का दावा पेश करे।' 5 वें अध्याय के माध्यम से लेखक ने पिछड़ी जातियों के राजनीतिक महत्वाकांक्षा को 'त्रिवेणी संघ' के माध्यम से स्थान दिया है। जनेऊ आंदोलन की पृष्ठभूमि में खेतिहर समुदाय में राजनीतिक जागरूकता तेजी से फैल रही थी। तथाकथित ऊंची जातियों ने खेतिहर जातियों के जनेऊ पहनने का हिंसात्मक विरोध किया। कांग्रेस में खेतिहर समुदाय के कार्यकताओं की उपेक्षा से इस वर्ग के राजनीतिक कार्यकर्ता पहले से नाराज चल रहे थे। फलस्वरूप खेतिहर समुदाय के राजनीतिक और सामाजिक नेतृत्व वर्ग ने एक राजनीतिक मंच बनाने का निर्णय किया। इस मंच को नाम दिया गया-त्रिवेणी संघ। खेतिहर समुदाय के लिए राजनीतिक हक-हिस्सेदारी हासिल करने की दिशा में यह मंच प्रस्थान बिंदु बना। परंतु यह मंच शीघ्र ही बिखराव का शिकार हुआ। कारण था-जनेऊ आंदोलन से उपजा ब्राह्मणवादी मूल्यों का उभार। लेखक इस तथ्य को इस प्रकार दर्ज करते हैं कि जनेऊ आंदोलन से उपजे श्रेष्ठता मनोग्रंथी ने पिछड़े खेतिहर समुदाय में वर्गीय चेतना की राजनीतिक संस्कृति विकसित होने में अवरोध पैदा किया। जनेऊ धारण कर पिछड़ी जातियां क्षत्रियत्व और शूद्रत्व के बीच झूलती रही। इस प्रकार कई विसंगतियों का शिकार होकर त्रिवेणी संघ बिखर गया।

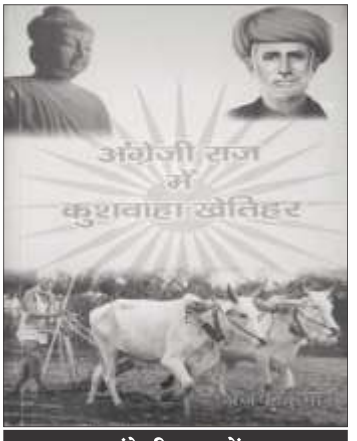

पुस्तक : अंग्रेजी राज में कुशवाहा खेतिहर
लेखक : अजय कुमार
मूल्य : 125
अलका प्रकाशन, पटना
मोबाइल नम्बर : 9470638155

पुस्तक का आठवां अध्याय 'राष्ट्रीय आंदोलन और खेतिहर' नाम से है। इस अध्याय में लेखक ने खेतिहर जातियों के राष्ट्रीय आंदोलन में सहभागिता को रेखांकित किया है। वे लिखते हैं कि अंग्रेजी राज में जितने भी आंदोलन या विद्रोह हुए सभी की जड़ में अत्यधिक लगान की वसूली थी। सभी में रैयतों ने किसी-न-किसी रूप में भाग लिया था। महात्मा गांधी के राष्ट्रीय मंच पर आगमन के बाद भी यह सिलसिला जारी रहा। गांधी जी चाहते थे कि किसान अलग से आंदोलन न करें। बल्कि वे स्वराज आंदोलन के सहभागी बनें। गांधी जी का मानना था कि स्वराज हासिल होते ही किसानों की समस्या हल कर ली जाएगी। जबकि किसानों की चेतना कह रही थी कि कांग्रेस जमींदारों की पार्टी है। इस पार्टी से किसानों को उम्मीद नहीं रखनी चाहिए। किसान देसी जोंक से मुक्ति के मार्ग तलाश रहे थे। पुस्तक का नौवां अध्याय है- 'खेतिहरों में प्रतिरोध का स्वर।' इस अध्याय में खेतिहर समाज के अपने स्वाभिमान के लिए उठाए गए कदमों के साथ-साथ प्रतिरोध की महत्वपूर्ण घटनाओं को दर्ज किया गया है। अध्याय तीन से लेकर नौ तक के विषयवस्तु एक दूसरे से अन्तर्सम्बन्धित हैं। इसलिए कहीं-कहीं पुनरुक्ति दोष भी है। इन अध्यायों को थोड़ा और निखारने की जरूरत थी। प्रस्तुत पुस्तक का दसवां अध्याय 'कुशवाहा मुसलमान' से संबंधित है। इस अध्याय में मुस्लिम समुदाय के बागबां जाति से लेकर अरैन-अरियन जैसी जातियों का वर्णन है। इन जातियों को कोयरी-दांगी जैसी हिन्दू जाति का धर्म परिवर्तित रूप माना जाता है। पुस्तक का ग्यारहवां और अंतिम अध्याय खेतिहर समुदाय की 'आजादी के बाद : पहचान की संकट के बीच नयी पहल' शीर्षक के रूप में है। इस अध्याय में गैर-कांग्रेसवाद की लोहियावादी राजनीति, अर्जक संघ : गैर-ब्राह्मणवादी आंदोलन की बुनियाद, शोषित समाज दल की राजनीति और बिहार लेनिन जगदेव प्रसाद का राजनीतिक उभार तथा कुशवाहा महासभा का बहुजन विमर्श जैसे विषयों का समावेश किया गया है।

■

रामनरेश यादव

धनिक लाल मंडल : जाति तोड़ो-जमात जोड़ो के समाजवादी चैम्पियन

बिहार के समाजवादियों में अग्रगण्य धनिक लाल मंडल का जन्म 30 मार्च 1932 को बिहार प्रांत के तत्कालीन दरभंगा (अब मधुबनी) जिले के घोघरडीहा प्रखंडान्तर्गत बेलहा गांव में हुआ था। यह गांव मधुबनी जिले के पूर्ववर्ती भाग में बह रही भूतही बालान नदी के पश्चिमी किनारे पर स्थित है। इनके पिता बुन्नी मंडल इलाके के संपन्न किसान थे। माता नुनूवती देवी के चार पुत्रों में सबसे छोटे धनिक लाल मंडल की शिक्षा गांव की प्राथमिक पाठशाला से प्रारंभ हुआ तथा उच्च प्राथमिक शिक्षा उन्होंने मध्य विद्यालय हुलासपट्टी से प्राप्त की। पढ़ाई में इनकी रुचि को देखते हुए उनके मंझले बड़े भाई महादेव मंडल? ने उन्हें खूब प्रोत्साहित किया। यह 1942 के अगस्त क्रांति के बाद का दौर था। देश राजनीतिक करवट ले रहा था। अंग्रेजों भारत छोड़ो के नारे सुदूरवर्ती गांवों में भी अनुगूंजित हो रहे थे। इलाके में कोई हाईस्कूल न होने से महादेव मंडल जी अपने छोटे भाई की आगे की शिक्षा को लेकर चिंतित थे। उन्होंने धनिक लाल की शिक्षा के लिए उन्हें दरभंगा भेजने का निर्णय किया। दरभंगा स्थित नार्थ ब्रुक जिला स्कूल में नामांकन करवाया गया। जहां से वे मैट्रिक उत्तीर्ण हुए। उन दिनों हाईस्कूल के छात्र स्वतंत्रता आंदोलन से संबंधित गतिविधियों में शामिल होते रहते थे। उन गतिविधियों में उनकी गहरी रुचि थी। वे कांग्रेस के छात्र शाखा से भी जुड़ हुए थे। स्नातक की उपाधि उन्होंने चन्द्रधारी मिथिला महाविद्यालय, दरभंगा प्राप्त की। उच्चतर शिक्षा के लिए धनिक लाल मंडल जी इलाहाबाद चले गए। जहां वे प्रतिष्ठित इलाहाबाद यूनिवर्सिटी से एम.ए. और एल.एल.बी. की डिग्री हासिल किए। सामाजिक और शैक्षिक रूप से पिछड़े इलाके के लिए उनकी यह उपलब्धि बड़ी घटना थी।

समाजवादी धारा से जुड़ाव

जिन दिनों धनिक लाल मंडल जी पूर्व के आक्सफोर्ड कहे जाने वाले इलाहाबाद यूनिवर्सिटी में पढ़ाई कर रहे थे, इस युनिवर्सिटी के छात्रों एवं अध्यापकों का समाज, शासन और राजनीति पर अच्छी पकड़ थी। यहां पढ़ने वाले छात्रों की अच्छी खासी संख्या अखिल भारतीय प्रशासनिक सेवा और राज्य प्रशासनिक सेवाओं में चुने जाते थे। परंतु यहां के छात्रों का एक वर्ग ऐसा भी था जो समाज को राजनीति की एक नई धारा-समाजवाद से सींचने के उद्यम में लगा था। देश को समाजवाद के आदर्शों के अनुरूप ढालने के संकल्प लेने वाले युवाओं की उस टोली में धनिक लाल भी शामिल थे। वे युनिवर्सिटी कैम्पस की छात्र राजनीति के दौरान समाजवादी सिद्धांतों को समाज और सत्ता में समान रूप से लागू करने के लिए प्रतिबद्ध राजनीतिज्ञ डॉ. राम मनोहर लोहिया के संपर्क में आए। वसुलों के पक्के डॉ. लोहिया के सिद्धांत और व्यवहार ने युवा धनिक लाल को इतना प्रभावित किया कि वे 1956 ई. में सोशलिस्ट पार्टी से स्थायी रूप से जुड़ गए। कम शब्दों में बेबाकी से तथ्यों को रखना युवा धनिक लाल की विशेषता थी। उन्होंने सादा जीवन के साथ उच्च आदर्शों को अपने जीवन में ढाल लिया था। समाजवाद की बेहतरीन समझ और उस विचार को आमजनों तक ले जाने के उनके कौशल ने उन्हें पार्टी में शीघ्र ही लोकप्रिय बना दिया था। 1957 ई. में वे सोशलिस्ट पार्टी के बिहार राज्य प्रांतीय सचिव बनाये गए। संगठन विस्तार की उनकी योग्यता और क्षमता की कद्र करते हुए सोशलिस्ट पार्टी के केंद्रीय नेतृत्व ने 1959 ई. में उन्हें राष्ट्रीय महासचिव का पद दिया । 1962 ई. में उनको संयुक्त सोशलिस्ट पार्टी का संयुक्त सचिव बनाया गया। उनकी मेहनत की बदौलत सुदूरवर्ती गांवों के अनपढ़ लोग भी समाजवाद से परिचित हुए। तत्कालीन कांग्रेस के सामंती व पूंजीवादी चरित्र से परेशान लोग सोशलिस्ट पार्टी की ओर टकटकी नजर लगाए हुए थे।

धनिक लाल मंडल जैसे समाजवादी कार्यकताओं की अथक मेहनत और कांग्रेसी शासन की अकर्मण्यता के खिलाफ डॉ. राम मनोहर लोहिया के गैर-कांग्रेसवाद के नारे ने 1967 में असर दिखाया। जनता परिवर्तन की लहर पर सवार थी। देश में पहली बार नौ राज्यों में गैर-कांग्रेसी सरकार बनी। धनिक लाल मंडल ने फुलपरास विधानसभा क्षेत्र के कांग्रेसी गढ़ को ध्वस्त कर समाजवादी परचम लहराने में कामयाबी हासिल की। बिहार में संयुक्त विधायक दल की सरकार बनी और धनिक लाल मंडल जी बिहार विधानसभा के अध्यक्ष बने। यह उनकी विद्वता, नेतृत्व कौशल की स्वीकारता, सत्यनिष्ठा, ईमानदारी और लोकप्रियता का परिणाम था कि मात्र 35 वर्ष के उम्र में विधानसभा के गरिमामयी पीठ पर आसीन हुए। उन्होंने इस पद की गरिमा को अक्षुण्ण रखा। संविद सरकार के खिलाफ जब अविश्वास प्रस्ताव आया तो उन्हें सरकार की मदद करने के लिए इशारा किया गया। उन्हें कहा गया कि आप अविश्वास प्रस्ताव की तिथि दो दिन आगे बढ़ा दें। परंतु मंडल जी की नैतिकता ने आसन की गरिमा को अक्षुण्ण रखने के लिए ऐसा करने से मना कर दिया। सरकार गिर गई। उनकी नैतिकता एक नजिर बन गई। वे 1969 ई. के बिहार विधानसभा के मध्यावधि चुनाव में फुलपरास विधानसभा से पूनः निर्वाचित हुए। लौकहा क्षेत्र से 1972 में विधानसभा सदस्य के रूप में उनका तीसरा निर्वाचन हुआ। 1974 में जयप्रकाश नारायण के नेतृत्व में छात्र आंदोलन जब परवान चढ़ा तो उन्होंने सरकार के विरोध में अपने साथियों के साथ विधानसभा की सदस्यता से इस्तीफा दे दिया तथा आंदोलन का नेतृत्व करने लगे। 1975 में आपातकाल लागू होने पर वे भूमिगत हो गए तथा मधुबनी के छात्रों को नेतृत्व संभालने के लिए प्रशिक्षण देते रहे और मार्गदर्शन करते रहे।

आपातकाल के बाद 1977 में हुए चुनाव में धनिक लाल मंडल झंझारपुर लोकसभा निर्वाचन क्षेत्र से संसद सदस्य निर्वाचित हुए। मोरारजी भाई देसाई के नेतृत्व वाली केन्द्रीय सरकार में उन्हें गृह राज्यमंत्री की जिम्मेदारी दी गई, जिसे उन्होंने बखूबी निर्वहन किया। उनकी सर्वस्वीकार्यता का परिणाम था कि वे चौधरी चरण सिंह की नेतृत्व वाली अल्पकालिक सरकार में भी इस पद पर बने रहे। 1980 ई. में वे एक बार फिर झंझारपुर संसदीय क्षेत्र से लोकसभा सदस्य चुने गए। वे लोकसभा में लगातार जनहित के मुद्दे उठाते रहे। सन 1984 के लोकसभा चुनाव में इंदिरा गांधी हत्याकांड से उपजे कांग्रेस की सहानुभूति लहर में वे हार गए। परंतु आमजनों से दुख-दर्द से उनका रिश्ता बना रहा। सन 1989 के लोकसभा निर्वाचन के बाद वी.पी. सिंह

के नेतृत्व में केन्द्रीय सरकार का गठन हुआ। उन्हें हरियाणा का राज्यपाल बनाया गया। वे इस पद पर 07 फरवरी 1990 से 14 भी 1995 तक रहे। बीच में वे राजस्थान के राज्यपाल के अतिरिक्त प्रभार में भी रहे।

धनिक लाल मंडल बिहार के लोकप्रिय नेता रहे हैं। सामाजिक न्याय और समाजवादी सपने को धरती पर उतारने के लिए वे जीवनपर्यंत कोशिश करते रहे। लोहिया का प्रसिद्ध नारा 'जाति तोड़ो, जमात जोड़ो' को उन्होंने अपने जीवन, परिवार और मित्रों संग जमीन पर उतारा। उनके परिवार में लगभग आधे दर्जन से अधिक शादियां अन्तरजातीय और अन्तर धार्मिक हुई हैं। सभी शादियां अलग-अलग जातियों में हैं। वे लगातार समाज के लोगों को इस तरह की शादियों के लिए प्रोत्साहित करते रहे। उनका वैज्ञानिक नजरिया समाज का पथप्रदर्शन करता रहा। अंधविश्वास और कर्मकाण्ड के प्रति उनके बैर से दुनिया वाकिफ थी। वे मृत्युभोज के सख्त खिलाफ थे। उनके जीते जी उनके परिवार में कभी मृत्युभोज का आयोजन नहीं हुआ। यह परंपरा उनके मृत्यु पर उनके पुत्रों ने भी कायम रखा। वे सादगी और सरलता के प्रतिमूर्ति थे। उनका कहना था कि मृत्यु भोज अभिशाप है। इसके कारण गरीबी बढ़ती है और समाजवादी लक्ष्य को हासिल करने में बाधा उत्पन्न होती है। जनप्रिय नेता धनिक लाल मंडल जी का 90 वर्ष की आयु में 13 नवम्बर 2022 को चंडीगढ़ में निधन हो गया। उन्होंने अपने जीवन काल में कई सामाजिक संस्थाओं का निर्माण किया। 'मधुबनी जिला समग्र विकास संस्थान' और 'शिक्षा समाज न्यास' उनमें से मुख्य है। उन्होंने 1980-84 तक हरिजन सेवक संघ, बिहार की सदारत की तथा भारत हरिजन सेवक संघ के सदस्य रहे। उन्होंने फुलपरास में छात्र नेता शहीद परमेश्वर के नाम पर इंटर कालेज खोलने में मदद की। आदरणीय मंडल जी के नाम पर मधुबनी जिले के लौकही अंचल स्थित पिपरौन गांव में एक हाईस्कूल है। उनकी सामाजिक और राजनीतिक विरासत को उनके पुत्र भरत भूषण मंडल जी संभाल रहे हैं, जो सम्प्रति लौकहा क्षेत्र से बिहार विधानसभा के राजद के सदस्य हैं।

जनता पार्टी की केन्द्रीय सरकार के समय मंडल आयोग के गठन के वक्त गृह मंत्रालय में एससी और बीसी मामलों के प्रभारी संयुक्त सचिव रहे पी.एस.कृष्णन 'भारतीय कार्यपालिका में सामाजिक न्याय का संघर्ष' में अपने अनुभव और आपबीती सुनाते हुए हमारे समाजवादी पुरखे को याद करते हुए लिखते हैं,"धनिक लाल मंडल डॉ. राम मनोहर लोहिया की विचारधारा के निष्ठावान अनुयायी थे और श्री कपूर्री ठाकुर के कट्टर समर्थक थे। जितने भी राजनेताओं से मेरा परिचय हुआ है, उनमें से श्री कपूर्री ठाकुर सबसे निष्ठावान और ईमानदार थे। वंचित वर्गों की बेहतरी के लिए काम करने के प्रति श्री धनिक लाल मंडल भी उतने ही प्रतिबद्ध थे, जितने कि श्री कपूर्री ठाकुर। श्री धनिक लाल मंडल मेरे इस तर्क.से सहमत थे कि दलितों की भलाई हमारी पहली प्राथमिकता होनी चाहिए और मेरी सलाह मान ली। लगभग एक दशक बाद सन 1990 में, जब मैं पिछड़े वर्गों को मान्यता और आरक्षण दिलवाने में सहयोगी बन सका,तब मुझे यह संतोष था कि मैंने न केवल उनके प्रति अपने सामाजिक और संवैधानिक कर्तव्य का अनुपालन किया, वरन श्री धनिक लाल मंडल से किया गया अपना वादा भी निभाया। श्री धनिक लाल मंडल के योगदान को वर्तमान और आने वाली पीढ़ियों को याद रखना चाहिए।"

(लेखक हिन्दी के महत्वपूर्ण विमर्शकार हैं।)

■

संस्मरण

अशोक कुमार सिन्हा

जब पैसे नहीं रहने के कारण उनका टिकट कट गया

वर्ष 1988। तब मैं पटना के किदवईपुरी मोहल्ले में अवस्थित पोस्ट एंड टेलीग्राफ कॉलोनी में रहता था। दो कमरों का वह फ्लैट था। वह फ्लैट मेरे मौसाजी को आवंटित था, जो टेलीफोन एक्सचेंज में कार्यरत थे। सेवानिवृत होने के बाद वे अपने बड़े बेटे के पास बोकारों में रहने लगे थे। लेकिन उन्होंने वह फ्लैट खाली नहीं किया गया था। उसी फ्लैट में रहकर मैं प्रतियोगी परीक्षाओं की तैयारी कर रहा था। उस समय मेरे निकटतम दोस्त हुआ करते थे, शैलेन्द्र कुमार। वे बिहार इंजीनियरींग कॉलेज के छात्र थे और लोकदल की छात्र इकाई छात्र-सभा के कार्यक्रम में उनकी सक्रिय भूमिका रहती थी। पटना विश्वविद्यालय के सीनेटर के रूप में छात्रों की समस्याओं को लेकर शैलेन्द्र काफी सक्रिय रहते थे। शैलेन्द्र के चाचा श्री धनिक लाल मंडल तत्कालीन लोकदल के दिग्गज नेता हुआ करते थे और श्री कपूर्री ठाकुर के काफी निकटतम एवं विश्वस्त नेताओं में उनकी गिनती होती थी। कपूर्री ठाकुर की तरह उनका चरित्र भी काफी ईमानदार था। कठिन से कठिन परिस्थितियों में भी धनिक लाल मंडल ने न केवल सार्वजनिक जीवन में, वरन व्यक्तिगत एवं पारिवारिक मामलों में भी कभी अपने सिद्धांतों से समझौता नहीं किया था और न ही अपने परिवार या अपनी सुख-सुविधाओं की परवाह की थी। धनिक लाल मंडल के पास उन दिनों पटना में रहने का कोई ठौर-ठिकाना नहीं था, इसलिए शैलेन्द्र के अनुरोध पर वे पोस्ट एंड टेलीग्राफ कॉलोनी वाले फ्लैट में मेरे साथ ही रहने लगे थे। वहां उनसे मिलने के लिए बिहार विधान सभा में विपक्ष के नेता कपूर्री ठाकुर समेत लोकदल के दिग्गज नेताओं का आना-जाना लगा रहता था।

18 फरवरी, 1988 का वह मनहूस पल मैं आजतक नहीं भूल पाया हूं, जब कपूर्री ठाकुर के असमायिक निधन की सूचना हमें मिली थी। श्री धनिक लाल मंडल सुनकर कुछ देर के लिए जड़ हो गये थे। ऐसा लगा कि उन्हें काठ मार गया हो। उनकी सोचने-समझने की शक्ति ही चली गयी थी। बड़ी मुश्किल से तब मैंने उन्हें संभाला था। थोड़ा संयत होने के बाद वे 2-देशरत्न मार्ग के लिए रवाना हो गए थे, जहां कपूर्री ठाकुर का पार्थिव शरीर रखा हुआ था।

कपूर्री ठाकुर के निधन के बाद उनके उत्तराधिकारी के चयन को लेकर लोकदल में रस्साकशी शुरू हो गयी थी। नेता पद के लिए अनूप लाल यादव और लालू यादव के बीच कड़ा मुकाबला था। धनिकलाल मंडल उन दिनों किसी भी सदन के सदस्य नहीं थे, लेकिन ईमानदार व्यक्तित्व के चलते उनका प्रभामंडल बहुत बड़ा था। तत्कालीन लोकदल में उनकी सहमति या असहमति मायने रखती थी। अनूपलाल यादव से धनिकलाल मंडल की राजनीतिक एवं वैचारिक निकटता जगजाहिर थी।

उन्हीं दिनों की बात है। एक दिन सुबह-सुबह मेरे फ्लैट के सामने एक जीप आकर रूकी। मेरी नजर जब उस ओर गयी तो देखा कि ड्राईविंग सीट पर लालू प्रसाद थे और उनकी दूसरी तरफ श्री शरद यादव बैठे हुए थे। लालू प्रसाद अपनी सीट पर ही बैठे रहें और शरद

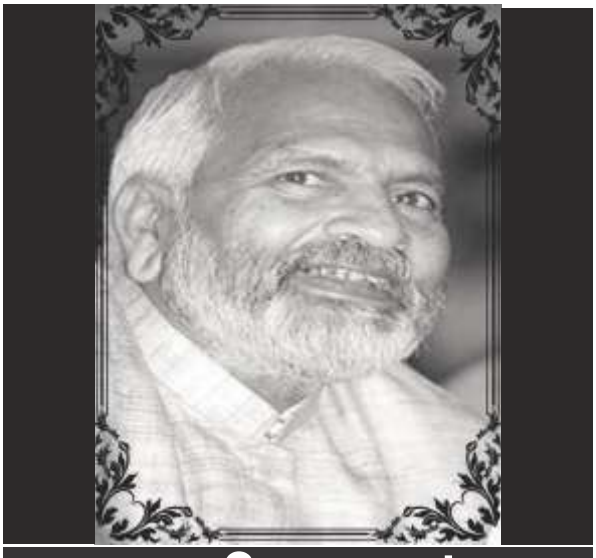

स्मृति शेष धनिक लाल मंडल

(जन्म 30 मार्च 1932 - मृत्यु 13-नवंबर-2022)

यादव जीप से उतरकर हमारी फ्लैट की तरफ आये। धनिक लाल मंडल उस समय घर में ही थे। मैंने दौड़कर दरवाजा खोला। शरद यादव ने मंडल जी से मिलने की इच्छा जाहिर की। मैंने मंडल जी के कमरे की तरफ ईशारा कर दिया और वे उनके कमरे में प्रवेश कर गए। प्रणाम-पाती के बाद काफी देर तक दोनों के बीच राजनीतिक गुफ्तगू होती रही। उसका फलितार्थ क्या निकला? यह मुझे तब पता नहीं चल पाया था।

देश में लोकसभा का चुनाव वर्ष 1990 में होना था। लेकिन राजीव गांधी सरकार ने 1989 के नवम्बर माह में ही चुनाव कराने का निर्णय ले लिया था। राजीव गांधी के नेतृत्व वाली कांग्रेस पार्टी के विरोध में जनमोर्चा, जनता पार्टी, लोकदल और कांग्रेस (एस) का विलय होने के बाद जनता दल का गठन हो चुका था। कहने को तो जनता दल एक पार्टी थी। लेकिन भीतर ही भीतर उसमें घटकवाद जारी था। वी.पी. सिंह, देवीलाल, अजित सिंह और चन्द्रशेखर के अपने-अपने गुट थे और सभी अपने-अपने गुट के उम्मीदवारों को ज्यादा से ज्यादा टिकट दिलाने के प्रयास में थे। देवीलाल गुट के धनिक लाल मंडल बिहार के झंझारपुर लोकसभा सीट से जनता दल के टिकट के सशक्त दावेदार थे। दिल्ली में राजनीतिक सरगर्मियां जोरों पर थी।

वह युग मोबाइल का नही था। लैंडलाइन टेलीफोन भी संपन्न लोगों के पास ही उपलब्ध था। एक शाम जब मैं अपने आवास पर था, तभी धनिकलाल मंडल को खोजते हुए अनूपलाल यादव वहां आ पहुंचे। लेकिन धनिक लाल मंडल कहीं निकले हुए थे। अनूप लाल यादव ने मुझसे कहा कि दिल्ली से चौधरी देवी लाल जी का फोन आया है। मंडल जी का टिकट काटा जा रहा है। पार्टी के एक प्रमुख नेता ने केन्द्रीय चुनाव समिति की बैठक में यह धमकी दी है कि अगर झंझारपुर संसदीय सीट से देवेन्द्र प्रसाद यादव को उम्मीदवार नहीं बनाया गया तो वे राजनीति से संन्यास ले लेंगे। कल शाम में केन्द्रीय चुनाव समिति की निर्णायक बैठक है, उससे पहले मंडल जी को हर हाल में दिल्ली पहुँचकर देवी लाल जी से मुलाकात कर लेनी है।

देर रात जब धनिक लाल मंडल आवास पर लौटे तो मैंने उन्हें पूरा वाक्या कह सुनाया। सुनकर वे उद्दिग्न और परेशान हो गए। रात्रि में दिल्ली के लिए कोई ट्रेन भी नहीं थी। वैसे में पटना से दिल्ली जाने का एकमात्र सहारा वायुयान था। उन दिनों पटना से दिल्ली का वायुयान किराया 750/- रुपया था। धनिक लाल मंडल पैसे के जोड़-घटाव में लग गए। उस समय उनके पास कुल जमा-पूंजी मात्र 200 रुपए थी। उन्होने मुझसे पूछा कि क्या आप मुझे शेष रुपयों की मदद कर सकते हैं, मैं बाद में आपको लौटा दूंगा। उस समय मेरे पास भी सिर्फ 200 रुपया ही था, जो मैंने उन्हें तत्क्षण सुपुर्द कर दिया। उन्होंने कहा कि ठीक है, शेष पैसे की व्यवस्था कर कल सुबह मैं वायुयान से दिल्ली के लिए निकल जाऊंगा। अगले दिन वे सुबह-सुबह एक ब्रीफकेस में अपना सामान रखकर यह कहते हुए घर से निकल पड़ें कि मैं दो-चार दिन बाद ही दिल्ली से पटना लौट पाऊंगा।

उस दिन एक दोस्त के यहां मैं रात्रि-भोज पर आमंत्रित था। इसलिए घर लौटने में कुछ देर हो गई थी। रात्रि 10 बजे के करीब जब घर वापस लौटा तो मंडलजी को कमरे में उपस्थित देखकर हक्का-बक्का रह गया। वे बहुत विचलित और हताश दिख रहे थे। उन्होंने कहा कि शेष रुपयों की व्यवस्था नहीं हो पाई। इसलिए मैं आज दिल्ली नहीं जा पाया। मेरा टिकट भी कट गया। यह कहते-कहते उनका गला भर आया था। अगले दिन के अखबार में यह खबर सुर्खियों में थी कि झंझारपुर संसदीय क्षेत्र से धनिक लाल मंडल की जगह जनता दल ने देवेन्द्र प्रसाद यादव को उम्मीदवार बनाया है।

जो व्यक्ति 1967 से 1974 तक बिहार विधानसभा का सदस्य, 1967 से 1969 तक विधानसभा का अध्यक्ष और 1977 से लेकर 1979 तक श्री मोरारजी देसाई के मंत्रिमंडल में गृह राज्यमंत्री रह चुका है, वह दिल्ली जाने के लिए 400 रुपए की व्यवस्था भी नहीं कर पाया था। आज के समय में इस बात की कल्पना भी नहीं की जा सकती है। ऐसा था धनिक लाल मंडल का ईमानदार व्यक्तित्व।

जब कांग्रेसी शोहदों ने देवी लाल जी को अपमानित किया

वर्ष 1989 राजनीतिक दृष्टिकोण से काफी उथल-पुथल भरा था। बोफोर्स कांड, पंजाब में बढ़ते आतंकवाद और आसमान छूती कीमतों के चलते राजीव गांधी के नेतृत्व वाली कांग्रेस सरकार अपनी विश्वसनीयता और लोकप्रियता खो रही थी। राजीव मंत्रिमंडल में वित्त और रक्षा मंत्रालय का कामकाज सम्भाल रहे विश्वनाथ प्रताप सिंह कॉग्रेस और राज्यसभा से इस्तीफा देकर जन मोर्चा का गठन कर पूरे देश का दौरा कर रहे थे। बाद में जन मोर्चा, जनता पार्टी, लोकदल और कॉग्रेस (स) के विलय से जनता दल का निर्माण हो चुका था। द्रमुक, तेदेपा और असम गण- संग्राम परिषद जैसी क्षेत्रीय पार्टियों ने जनता दल के साथ मिलकर राष्ट्रीय मोर्चा का गठन कर लिया था।

नौवीं लोकसभा का चुनाव जनवरी, 1990 में होना था। लेकिन राजीव गांधी सरकार ने कुछ माह पहले ही चुनाव कराने का निर्णय ले लिया था। लोकसभा की 525 सीटों के लिए 22 और 26 नवंबर को दो चरणों में चुनाव कराने की घोषणा हो चुकी थी। हरियाणा के मुख्यमंत्री और ताऊ के रूप में प्रसिद्ध चौधरी देवी लाल ने घोषणा कर दी थी कि

मैं विश्वनाथ प्रताप सिंह को देश का अगला प्रधानमंत्री बनाऊंगा। राष्ट्रीय मोर्चा की ओर से वीपी सिंह और देवीलाल पूरे देश का चुनावी दौरा शुरू कर चुके थे। उन्हें व्यापक जन समर्थन मिलने लगा था। जनाकांक्षा अपने परवान पर थी। उसी क्रम में देवी लाल का तीन दिनों का चुनावी कार्यक्रम बिहार में बना था। पटना, बेगूसराय, मुंगेर होते हुए उन्हें भागलपुर तक जाना था। उसी क्रम में देवीलाल का नवंबर के प्रथम सप्ताह में तीन दिन का चुनावी कार्यक्रम बिहार में बना था। जनता दल का गठन तो हो चुका था, लेकिन भीतर ही भीतर उसमें घटकवाद जारी था। सभी अपने-अपने खेमा के उम्मीदवारों को ज्यादा से ज्यादा टिकट दिलाने के प्रयास में थे। देवी लाल गुट के धनिक लाल मंडल बिहार के झंझारपुर सट से जनता दल के टिकट के सशक्त दावेदार थे। लेकिन, दल के विभिन्न घटकों की आपसी खींचतान में उनका टिकट काटकर वहां से देवेन्द्र प्रसाद यादव को उम्मीदवारी दे दी गई थी। धनिक लाल मंडल काफी मायूस रहने लगे थे। वे देवी लाल के चुनावी भ्रमण के दौरान उनके साथ जाना चाहते थे। लेकिन उनका आर्थिक संकट इसमे आड़े आ रहा था। एक दिन उन्होंने मुझे बुलाकर पूछा कि देवीलाल जी के चुनावी दौरे में आपके मित्र नवल किशोर यादव क्या मुझे अपनी गाड़ी में साथ लेकर चल सकते हैं? जब मैंने नवल जी से इस संबंध में बातचीत की तो वे सहर्ष तैयार हो गए।

नियत तिथि को सुबह 10 बजे हमलोग सड़क मार्ग से देवी लाल के काफिले के साथ निकल पड़े। उनकी पहली सभा बाढ़ संसदीय क्षेत्रान्तर्गत बख्तियारपुर में थी। बाढ़ से जनता दल के टिकट पर पर राज्य के वर्तमान मुख्यमंत्री नीतीश कुमार चुनावी मैदान में थे। उनके मुकाबले कांग्रेस की ओर से शेर-ए-बिहार के नाम से चर्चित राम लखन सिंह यादव थे। फतुहा से आगे बढ़ते ही हर मोड़ और नुक्कड़ पर देवी लाल का स्वागत करने को जन-समूह का सैलाब उमड़ पड़ा था। बख्तियारपुर की सभा 12 बजे थी। लेकिन जगह-जगह पर स्वागत के चलते देवी लाल को वहां पहुंचने में 2 बज गए थे। वहां की सभा में देवीलाल को देखने सुनने के लिए लाखों की भीड़ उमड़ी थी। देवीलाल ने पहले से ही यह सूचना दे रखी थी कि चुनावी मंच पर पार्टी की ओर से जितनी राशि मुझे भेंट की जाएगी, मैं उसका दुगुना दूंगा। उस मंच पर आम लोगों से चंदा एकत्रित कर 50000 की राशि देवी लाल को भेंट की गई थी। प्रत्युत्तर में देवी लाल ने उसका दोगुना यानी 100000 रुपया आयोजकों को सहायतार्थ प्रदान किया था। गौरतलब है कि उस समय का एक लाख रुपया आज दस लाख रुपया के बराबर होगा। उस समय चुनाव का खर्च भी आज की तुलना में काफी कम था। मंच से उतरते वक्त देवीलाल ने धनिक लाल मंडल को अपनी गाड़ी में बैठा लिया था। हमलोगों की गाड़ी उनके पीछे-पीछे चल पड़ी थी। अगली सभा बाढ़ में थी। बाढ़ में भी उन्हें सुनने के लिए लाखों की भीड़ थी। वहां भी मंच पर 50000 रुपये के बदले 100000 रुपया देवी लाल ने प्रदान किया था। मोकामा की चुनावी सभा में भी कमोवेश वैसी ही भीड़ लगभग हर सभा में अप्रत्याशित भीड़ और भर रास्ते छोटे- छोटे कस्बों में भी स्वागत सत्कार के चलते बेगूसराय पहुंचते-पहुंचते रात्रि को 8 बज गए थे। बेगूसराय के जीरो माइल पर अवस्थित एक होटल के दूसरे तल्ले पर देवी लाल और उनके संग आये लोगों के लिए आयोजकों ने रात्रि विश्राम की व्यवस्था कर रखी थी।

बेगूसराय से जनता दल के प्रत्याशी भारतीय पुलिस सेवा से अवकाश प्राप्त पदाधिकारी ललित विजय सिंह थे। कांग्रेस ने उनके मुकाबले बेगूसराय से 1980 और 1984 का लोकसभा चुनाव जीतने वाली श्रीमती कृष्णा शाही को पुनः चुनावी मैदान में उतारा था। श्रीमती कृष्णा शाही कांग्रेस की दिग्गज नेत्री थी और बेगूसराय क्षेत्र पर उनकी विशेष पकड़ मानी जाती थी। पहले के दो चुनावों में उन्होंने श्याम नंदन मिश्र और कपिलदेव सिंह जैसे धुरंधर नेताओं को पराजित किया था। जबकि ललित विजय सिंह राजनीतिक रूप से नौसिखिए थे। मुकाबला तगड़ा था। रात्रि के 9 बज रहे थे। देवी लाल ने अपने कमरे में ही बाजरे की रोटी और साग-सब्जी का ऑर्डर दे रखा था। देवीलाल के साथ सुरक्षा में हरियाणा से आये लगभग एक दर्जन सुरक्षा कर्मियों को भी भूख लग चुकी थी और वे उनसे अनुमति लेकर होटल के भूतल पर अवस्थित रेस्तरां में खाना खाने के लिए चले गए थे। देवी लाल का खाना आने में अभी विलम्ब था। देवी लाल और धनिक लाल मंडल के बीच बेगूसराय समेत राज्य के अन्य लोक सभा क्षेत्रों के राजनीतिक- सामाजिक समीकरण पर चर्चा चल निकली थी। मैं और नवल किशोर यादव श्रोता बने हुए थे।तभी कमरे में लम्बे-चौड़े कद के 5-6 लोगों ने प्रवेश किया। उनके कंधे पर बंदूकें थी। वे नशे में थे और खुद को कांग्रेस कार्यकर्ता बता रहे थे। उनके तेवर तल्ख थे और बेमतलब देवीलाल के प्रति अपशब्दों का प्रयोग कर रहे थे वे उन्हें बेगूसराय में सभा न करने की सलाह दे रहे थे और वैसा न करने पर परिणाम भुगतने की धमकी भी दे रहे थे। देवीलाल और धनिक लाल मंडल उन्हें समझाने और शांत करने का प्रयास कर रहे थे, लेकिन वे कहां मानने वाले थे। उनकी भाषा और ज्यादा अभद्र और उग्र हो चली थी। नवल किशोर यादव से जब बर्दाश्त नहीं हुआ तो ये उनसे उलझ पड़े। नौबत हाथापाई तक जा पहुंची। मैं उनकी मंशा ताड़ चुका था। मुझे यह समझते देर नहीं लगी कि उनका मकसद देवीलाल को नुकसान पहुंचाना है। मैंने आव देखा न ताव। सीढियों के सहारे दौड़ता हुआ भूतल पर जा पहुंचा। देवीलाल के सुरक्षाकर्मियों के हाथ में प्लेट थी और उन्होंने भोजन करना अभी शुरू ही किया था। मैंने उन्हें जोर से आवाज दी-'कुछ गुंडे देवीलाल जी के कमरे में घुसकर मारपीट कर रहे हैं।' इतना सुनना था कि वे अपनी अपनी प्लेटों को फेंककर हथियार समेत देवीलाल के कमरे की तरफ दौड़ पड़े। वहां पहुंचकर उनलोगों ने उन असामाजिक तत्वों को चारों तरफ से 'कवर' कर लिया और फिर उन्हें देवी लाल के कमरे से जबरन बाहर निकाला। घटना की खबर पाकर कुछ देर बाद स्थानीय पुलिस भी पहुंची थी। लेकिन राज्य में कांग्रेस की सरकार थी। मामले को रफा-दफा कर दिया गया था। यह बात और है कि उस चुनाव में ललित विजय सिंह ने कृष्णा शाही को रिकार्ड वोटों से हराकर जीत हासिल की थी। उस चुनाव में बिहार में जनता दल के 38 में से 32 उम्मीदवार चुनाव जीतने में सफल रहे थे।

आज भी जब कभी उस दिन की घटना की याद आती है, तो मेरा रोम रोम सिहर उठता है. अगर मैंने दौड़कर सुरक्षा कर्मियों को नहीं बुलाया होता, तो पता नहीं, उस दिन क्या होता।

(लेखक बतौर अपर निदेशक बिहार संग्रहालय, पटना में कार्यरत हैं।)

■

रामकृष्ण परार्थी

04 अप्रैल 1977 को बिहार के मधुबनी जिले के बिचखाना गांव में जन्मे रामकृष्ण परार्थी मैथिली साहित्य के युवा रचनाकार हैं। मैथिली में इनके दो कविता संग्रह- 'दू पटरीक बीच (2020 ई.)' तथा 'प्रतिकार एखन बाकी अछि' (2022 ई.) प्रकाशित हैं। वे हिन्दी और मैथिली में समान रूप से सक्रिय हैं। हिन्दी में उनका कविता संग्रह 'कर्त्तव्य पथ' और उपन्यास 'अहिंसात्मक प्रतिशोध' प्रकाशित हो चुका है। साहित्य शिल्पी सम्मान (2019) एवं नवहस्ताक्षर (2021) सम्मान से सम्मानित परार्थी अपनी रचनाओं में न सिर्फ सामाजिक विषमता, भेदभाव और वंचना के कारणों की पड़ताल करते हैं बल्कि अन्याय के पारंपरिक उपकरणों पर जोरदार प्रहार भी करते हैं। संवैधानिक मूल्यों की स्थापना के लिए आग्रह, वैज्ञानिक चेतना और तार्किकता इनकी रचनाओं का उत्स है। इनकी सक्रियता से मैथिली साहित्य में बहुजन स्वर का विस्तार हो रहा है : सम्पादक)

प्रतिकार अभी बाकी है

आजादी तो मिल गई
अधिकार अभी बाकी है
सत्ता में बराबरी की
भागीदारी अभी बाकी है

बाकी है युद्ध अभी
समता-भाईचारा के दुश्मन से
हमें अछूत समझने वाले
मनु के वंशज से

अब हम समझते हैं
ब्राह्मणवादी छल प्रपंच को
मनुष्य को दलित बनाने वाले
उसके धर्मग्रंथ के षड्यंत्र को

भारत के संविधान में जब
हमें मिला है, बराबरी का अधिकार
तब भी हमें धर्म की फांस में
मिलता है अपमान और तिरस्कार

लोग कहते हैं, भूल जाओ
पुराने दुख-संताप को
जाति जनित अत्याचार को
स्वाभिमान पर हुए कुठाराघात को

परंतु हम कैसे भूल जाएं
शूरवीर एकलव्य को
शम्बूक ऋषि के वध को
रोहित वेमुला कांड को

बाकी है युद्ध अभी
भ्रष्ट और बईमान से
हमारा हक-हिस्सा खाने वाले
हर उस शैतान से

हजारों वर्ष के संताप का
हिसाब अभी बाकी है
शोषक-उत्पीड़क वर्ग का
प्रतिकार अभी बाकी है

धिक्कार है, धिक्कार

बहुत कुछ बदला है, समाज में
मैं करता हूं, स्वीकार
आज द्रोण के वंशज दे रहे हैं
एकलव्य के उत्तराधिकारी को पुरस्कार
बस, शर्त केवल यही है
कि अब तुम धनुष-वाण चलाने का
नहीं रखते हो, अधिकार
और यह शर्त समाज के स्वार्थी गद्दार सब
कर रहे हैं, हंसी-खुशी स्वीकार
ऐसी प्रतिभा और अभिव्यक्ति बेचकर
पुरस्कार खरीदने वाले चाटुकार सब को
धिक्कार है, धिक्कार।

मैथिली से अनुवाद : नरेश नदीम

महागठबंधन विधानमंडल दल की बैठक को संबोधित करते हुए तेजस्वी यादव

पूर्वी क्षेत्रीय परिषद् की 25वीं बैठक में दिग्गज नेताओं के साथ तेजस्वी यादव

किडनी ट्रांसप्लांट के पहले का पल : लालू प्रसाद यादव और रोहिणी आचार्य

किडनी देने के बाद रोहिणी आचार्य का कुशलक्षेम लेते तेजस्वी यादव

राष्ट्रीय जनता दल कार्यालय, बिहार द्वारा आदेशित तथा यूनाईटेड पिंटर्स एण्ड सर्विस प्रोभाइडर, सन्दलपुर, पटना द्वारा मुद्रित, मो.-8434977434